छाया : विशाल

हरीदत्त बाल पुस्तकालय
पु०सं०.....
बिजनौर

सैर का समय

बाग-बगीचों की हरियाली,
खिलते सुमन निराले,
ऊंचे पर्वत, झरझर झरने,
गहरे नदिया-नाले ।

सुबह-शाम का मंद समीरण,
धूप, गंध सुखदाई!
इनसे बनता स्वास्थ्य—
हकीमों ने है दवा बताई।

पढ़ने-लिखने और खेल से
जब भी फुरसत पाओ;
घर से बाहर खुली जगह में,
सदा सैर को जाओ।

—बिजलीरानी चौधरी

kissekahani.com

कुछ अटपटे कुछ चटपटे

नीरज मेहरा, इलाहाबाद :
यदि गधेके पास अक्ल नहीं, तो वह सोचता किस प्रकार है?
जरा सोचो तो!

पुष्पा सोमानी, वाराणसी :
'पराग' बार बार पढ़नेपर भी नया क्यों लगता है?
पराग होनेके कारण!

दीपकराज वशिष्ठ, कासगंज :
इंग्लैण्डमें सभी मनुष्य गोरे होते हैं, परंतु भारतमें काले और सांवले क्यों?
सूर्य देवताकी अत्यधिक कृपासे!

अमितकुमार मिश्र, सागर :
गरम कोट और गरम जेबमें क्या अंतर है?
भई, जेब गरम हो, तो कई गरम कोट खरीदे जा सकते हैं!

दिनेशनारायण भटनागर, लखनऊ :
कानूनकी आंखमें ममताके आंसू क्यों नहीं होते?
लोग प्यार-लाड़से बिगड़ न जाएं, इसलिए!

माला बोस, भोपाल :
लोग कहते हैं कि बच्चोंका शोर ही घरकी शोभा है, फिर अम्मां तंग होकर हमें कमरेमें क्यों बंद कर देती हैं?
शोर मचानेकी पूर्ण स्वतंत्रता देनेके लिए!

कुलबीर सिंह, नई दिल्ली-२७ :
सुना जाता है कि एटलसने सारी पृथ्वीको उठा लिया था, तो वह खुद कहां खड़ा हुआ था?
जहां पृथ्वी रखी थी!

रामबाबू सिंह, कोटवा :
हम आंख मूंदकर कैसे देख सकते हैं?
दूसरेकी आंख मूंद लो और खुद मजेसे देखो!

नेसार अहमद, तीन पहाड़ :
कहते हैं जो जैसी संगति करता है वह वैसा ही गुण पाता है। तो फिर धोबी गदहे-की संगति-से गदहा क्यों नहीं बन जाता?
धोबिनके डरके मारे!

अशोक सोरी, दल्ली राजहरा :
लोग बोलते हैं 'जूता' काटता है। परंतु उसके तो दांत ही नहीं होते, तो फिर वह कैसे काटता है?
दांत नहीं होते, तभी तो पैरोंमें पड़ा मसूड़ोंसे काटता रहता है, वरना सिरपर न चढ़ बैठे!

कु० रोमशा कश्यप, भोपाल :
हवेलीके बीच गड्ढा क्यों है?
गुप्त खजानेकी खुदाई होती रहनेके कारण!

एस. एच. महिपाल, अदोनी (कुरनूल) :
जो आदमी जूते खाते हैं, वे पीते क्या हैं?
दूधमें हल्दी या मोमियाई!

गुरदीपसिंह, बिलासपुर :
आंखोंके आगे अंधेरा कब छाता है?
जब दिनमें ही तारे दिखाई देने लगते हैं!

सुरेन्द्रकुमार गौड़, मुजफ्फरनगर :
अगर विद्यार्थी परीक्षा-केन्द्रमें ड्यूटी दें और अध्यापक पेपर करें, तो क्या होगा?
यही तो होता है—आप लोग सिर्फ ड्यूटी बजाते हैं, असली परीक्षा अध्यापककी ही होती है!

राजकुमार गर्ग, पटियाला :
हंसीके फौव्वारे और पानीके फौव्वारेमें क्या अंतर है?
पहलेसे गरमी आती है, दूसरेसे ठंडक!

मंजुला, नई दिल्ली :
'चटपटी चाट' और 'चटपटे उत्तरों' में क्या अंतर है?
'चटपटी चाट' में दूसरा पत्ता बनवानेके लिए फिर पैसे निकालने पड़ते हैं!

सत्यनारायण टाक, हिण्डोन शहर :
यदि छोटे छोटे बच्चोंके दाढ़ी-मूंछें आने लगें तो?
माताओंको गुदगुदी ज्यादा लगेगी, दूध क उतरेगा!

आलोक वर्मा, बरेली :
हमारा ध्यान पहले पतले आदमीपर

बच्चोंके अटपटे प्रश्नोंके चटपटे उत्तर हम इस स्तंभमें छापते हैं। जिनके प्रश्न अधिक अटपटे होंगे, उन्हें सुंदरसे पुरस्कार मिलेंगे। जिन्हें पुरस्कार मिले हैं उनके नामके पहले ★ का निशान लगा है। प्रश्न कार्डपर ही भेजो और एक बारमें तीनसे ज्यादा न भेजो। इस स्तंभमें पहेलियोंके उत्तर नहीं दिए जाएंगे। पता, याद कर लो: संपादक, 'पराग (अटपटे-चटपटे)', पो. आ. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बम्बई– १

जाकर मोटे आदमीपर क्यों जाता है?

रेल और बस आदिकी सीटोंपर उनके ज्यादा जगह घेर लेनेके कारण!

सैयद अनवरअली, सोहागपुर :

जब चींटीकी मौत आती है तब उसके पर निकल आते हैं और जब गीदड़की मौत आती है तब वह बस्तीकी तरफ भागता है, लेकिन जब इनसानकी मौत आती है, तब उसमें कौन-सी तब्दीली होती है?

उसकी बुद्धि गुद्दी पीछे हो जाती है!

राजीवकुमार मित्तल, चन्दौसी :

शर्मसे आंखें क्यों झुक जाती हैं?

जिससे दूसरोंको भी शर्म न आ जाए!

लक्ष्मीकांत वशिष्ठ, जयपुर–४ :

बच्चोंकी सबसे प्यारी चीज क्या है?

छह महीने तक दूध, छह बरस तक मक्खन और उसके बाद 'पराग'!

ब्रजेश्वरदयाल, पिपरिया :

पगड़ी यदि मनुष्यकी इज्जत है, तो जूता?

यह इसपर निर्भर है कि वह अपना है या दूसरेका!

यशवन्तसिंह, इलाहाबाद :

आदमी भगवानकी कसम क्यों खाते हैं?

भगवान अमर होता है यह समझकर!

सुरेश कुमार, इलाहाबाद :

अगर हम लोग 'पराग' के पृष्ठ बढ़ानेके लिए भूख हड़ताल कर दें, तो आप क्या करेंगे?

उसका नेतृत्व!

किशनचंद सिन्धी, सिरोही :

मिठाईका नाम लेनेसे क्या प्यासे आदमीके मुंहमें पानी भर आएगा?

अगर चटोरा भी हुआ, तो!

प्रकाशचन्द्र मंगराडे, भोपाल :

'पराग' को एक सप्ताहमें पढ़ें या एक माहमें, क्योंकि 'पराग' माहमें एक ही बार निकलता है?

पढ़ डालो चाहे एक सांसमें, सुनो एक माह तक!

शिवशंकर शंकरलाल जोशी, नागपुर :

उत्तर-पत्रिकाओंके उत्तरोंमें एकता होनेपर परीक्षक नकलका संदेह क्यों करने लगते हैं?

इसलिए कि उसमें अकलकी एकता नहीं होती!

हरिशंकर माहात, माजरी खादान, चन्द्रपुर :

दर्द पेटमें होता है और रोती हैं आंखें—क्यों?

मास्टरजीसे छुट्टी लेनेके लिए!

टेकचंद, मकराना :

इत्र नाकसे सूंघा जाता है, तो उसका फाहा कानमें क्यों रखते हैं?

चुगलखोरोंकी बदबू दूर रखनेके लिए!

जलजीतसिंह गुरुदत्ता, कालापीपल मण्डी :

जब दुश्मन गरजता है तब सैनिक गरजते हैं, और जब सैनिक गरजते हैं तब गोली। जब प्रधानमंत्री इंदिरा गरजती हैं, तब?

तब दुश्मन लरजने लगते हैं!

सुकदेव अग्रवाल, रायपुर :

लोग कहते हैं कि जितना मिलता है उसीमें संतोष करना चाहिए, तो क्या हम परीक्षामें फेल होनेपर संतोष कर लें?

इसी लिए फेल होनेपर कुछ नहीं मिलता—परीक्षा-फलमें रोल नंबर तक नदारद होता है!

शमीममोहम्मद खान, नागौर

शक्कर और चक्करमें क्या अंतर है?

राशन कार्डका!

★ **कु० गीता सिन्हा, द्वारा डा. एन. पी. सिन्हा, प्रोफेसर आफ केमिस्ट्री, तिरहुत एग्रीकल्चरल कालेज, ढोली, मुजफ्फरपुर :**

हर पिता अपने लड़कोंको डाक्टर या इंजीनियर बनाना चाहता है, चाहे उनका लड़का भोंदू ही क्यों न हो—आखिर क्यों?

क्योंकि पिता लोग अपने आपको डाक्टरों व इंजीनियरोंके बाप सिद्ध करना चाहते हैं!

★ **ओमप्रकाश सिन्हा, द्वारा डा० टी. एन. सिन्हा, व्ही. ओ. पो. आ. खलीलाबाद, जिला–बस्ती (उ० प्र०) :**

अगर कोई मनुष्य हर तरफसे निराश हो जाए, तो उसे क्या करना चाहिए?

हर तरफसे ध्यान हटाकर किसी एक तरफ लगाना चाहिए!

नन्ही शम्मीके पास ढेर-सारे नई किस्मके खिलौने हैं। जानवरोंके खिलौनोंमें सबसे दिलचस्प खिलौना भालूका एक बच्चा है। वह शम्मीके कमरेके दरवाजेके पास रखा है। सात इंची एक राकेट, प्लास्टिकके स्टैंडपर लगे बटनको दबाते ही, स्प्रिंगकी मददसे एक झटकेके साथ सात फीट ऊंचा चला जाता है। फिर हवाई जहाज जैसे पंख खोलकर कलाबाजी खाता वापस नीचे फर्शपर आ गिरता है। एक छोटा-सा यांत्रिक मानव बड़े कमाल दिखाता है। तीन छोटी गुड़ियां हाथमें उठाते ही 'मम्मी मम्मी' पुकारती हैं।

इन सब खिलौनोंमें शम्मीको जिस खिलौनेसे सबसे ज्यादा प्यार रहा है, वह एक भूरे बालों-वाला कुत्तेका पिल्ला है, जो अब आंखें झुकाए शम्मीके कमरेकी खिड़कीके नीचे उदास बैठा है।

शम्मीको यह खिलौना इतना ज्यादा पसंद था कि वह उसे अपनेसे कभी जुदा नहीं करती थी। स्कूल जाती, तो उसे अपने साथ ले जाती। सोते वक्त बिस्तरके सिरहाने रख लेती। पिल्ला भी अपनी नन्ही मालिकनसे बड़ा खुश था। शम्मी जब उसकी पीठपर धीरे धीरे हाथ फेरती, तो वह दुम उठाकर जोर जोरसे 'भौं-भौं' भौंकने लगता।

एक दिन बड़ा तमाशा हुआ। शम्मी स्कूलसे लौट रही थी। रास्तेमें उसने पिल्लेकी पीठपर हाथ फेरना शुरू कर दिया। पिल्ला दुम हिलाकर 'भौं-भौं' भौंकने लगा। उसके भौंकनेकी आवाज सुनकर आसपासके कुत्ते भी भौंकने लगे। शम्मीकी तरफ देखकर वे और ज्यादा भौंकने लगे। उसने पिल्लेकी पीठपरसे हाथ हटा लिया। पिल्लेने भौंकना बंद कर दिया। शम्मीको बड़ा मजा आया इसमें। वह खूब हंसी।

पिल्लेके प्रति शम्मीका इतना अधिक प्यार देखकर, दूसरे खिलौने पिल्लेसे ईर्ष्या करने लगे। पिल्ला भी अपनेको बड़ा खुशनसीब और दूसरे खिलौनोंसे खुदको बहुत बड़ा समझने लगा।

फिर एक दिन पिल्लेका यह मीठा स्वप्न जैसे टूट गया। शम्मीके पापा उसके लए नर्म नर्म बालोंवाली,काली चमकीली आंखोंवाली बिल्लीका एक सुंदर खिलौना ले आए। पीठपर हाथ फेरते ही वह 'म्याऊं-म्याऊं' करने लगती।

शम्मी बिल्लीके इस खिलौनेपर कुछ ऐसी रीझी कि वह पिल्लेको एकदम भूल-सी गई। पिल्ला

कहानी

बहादुर पिल्ला

kissekahani.com

अब तक खुदको सारे खिलौनेमें सबसे अच्छा समझने लगा था। उसके प्रति शम्मीकी इस बेरुखीसे दूसरे खिलौनोंके सामने उसका सिर आप ही आप शर्मसे नीचे झुक गया। शम्मीने बड़ी लापरवाहीसे उसे अपने कमरेकी खिड़कीके पास पटक दिया और कहा—"तुम बेकार हो गए हो। अब मैं बिल्लीके खिलौनेसे खेलूंगी।"

पिल्ला रोने लगा। उसे शम्मीके इस बर्ताव-पर बड़ा आश्चर्य हुआ। क्या मैं सचमुच बेकार हो गया हूं?— सोचकर उसने अपने शरीरपर नीचेसे ऊपर तक एक उचटती-सी निगाह डाली। वास्तवमें आज पहली बार उसने खुदको इस तरह-से देखा था।

पिल्लेकी दोनों आंखें चेहरेसे नीचे झूल रही थीं। जगह जगहसे बाल उखड़ गए थे। वह बड़ा भद्दा लग रहा था। अपनी यह हालत देखकर वह बड़ा उदास हुआ। सामने अलमारीमें लगे शीशेमें उसने अपनी शक्ल देखी। उसके शरीरकी चमकती पोशाक कहीं कहींसे फटनेके साथ साथ

मैली भी हो गई थी। उसका हंसता चेहरा रोनी शक्लमें बदल गया था। कमरेके दूसरे खिलौने उसे देखकर आपसमें हंसने लगे। कभी वह भी उन्हें देखकर हंसा करता था। उसने इस घटनासे यही सबक सीखा कि दूसरेको बुरी हालतमें देखकर उसपर कभी हंसना नहीं चाहिए।

इस तरह पड़े पड़े पिल्लेको कई दिन गुजर गए। उसके शरीरपर धूलकी हल्की-सी परत जम गई। वह उसी जगह खिड़कीके पास पड़ा था। इस दौरान उसने शम्मीका ध्यान अपनी तरफ खींचनेकी कई बार कोशिश की, ताकि वह उसकी हालत सुधरवाए और उससे पहले हीकी तरह खेले। वैसे भी बिल्ली और उसमें कोई ज्यादा फर्क नहीं था। फर्क सिर्फ इतना ही था कि वह अब पुराना पड़ गया था और बिल्ली बिल्कुल नई थी। शम्मीका ध्यान अपनी तरफ खींचनेके लिए वह कई बार उसकी टांगोंसे लिपट गया, गिड़गिड़ाया। मगर शम्मी उसे बेकार खिलौना

— हमीदुल्ला खां

समझकर हर बार आगे बढ़ गई।

अब दूसरे खिलौने उसकी और ज्यादा हंसी उड़ाने लगे। वे अपनी बातोंमें भी उसे शरीक नहीं करते थे। यह देखकर वह अपना दिल मसोसकर रह जाता। वह सोचता—क्या मेरी किस्मतमें यह दिन देखना ही लिखा था!

एक रात सारे खिलौने आपसमें गपशप लगाकर खुश हो रहे थे। पिल्ला वहीं खिड़कीके पास उदास बैठा ऊंघ रहा था। तभी उसने खिड़कीके बाहर किसीकी आहट सुनी। उसने खिड़कीके शीशेकी तरफ देखा। दो लाल आंखें बाहरसे कमरेके भीतर झांक रही थीं। फिर खिड़कीके बाहर खट्-खट्की आवाज हुई। आवाज सुनकर सारे खिलौने डरसे कांपने लगे। उन्हें यह समझनेमें जरा भी देर नहीं लगी कि बाहर कोई चोर है। लेकिन पिल्लेने हिम्मतसे काम लिया। वह चोरको पकड़नेकी तरकीब सोचने लगा।

चोरने जरा देरमें खिड़की तोड़कर एक पांव कमरेमें अंदर रख दिया। पिल्ला सरककर उसके पांवके नजदीक आ गया। चोरका दूसरा पांव पिल्लेकी पीठपर पड़ा। वह जोर जोरसे 'भौं-भौं' भौंकने लगा। कुत्तेकी भौंकनेकी आवाज सुनकर

चोर एकदम डर गया और वहांसे निकल भागनेकी हड़बड़ाहटमें वह अलमारीसे टकरा गया।

उधर पिल्लेके भौंकनेकी आवाज सुनकर शम्मीके पापा दौड़कर कमरेमें आ गए। उनके साथ शम्मी भी सहमी हुई कमरेमें आई। चौकीदार कुत्तेके भौंकनेकी आवाज सुनकर हाथमें डंडा लिये पहले ही खिड़कीके बाहर आ खड़ा हुआ था। चोरने जैसी ही खिड़कीसे कूदकर भाग निकलनेकी कोशिश की, उसे चौकीदारने पकड़ लिया।

पिल्लेकी बहादुरीपर शम्मीके पापा और शम्मी बड़े खुश हुए। शम्मीने पिल्लेको गोदमें उठाकर पीठ सहलाई, तो वह खुशीसे 'भौं-भौं' चीख उठा। शम्मीने अपने पापासे कहा—"मैंने इसे बेकार खिलौना समझकर यहां पटक दिया था। अब मैं समझी कि बेकार चीज भी वक्तपर काम आ सकती है।"

अगले दिन पिल्लेके लिए नई पोशाक सिलवाई गई। उसकी झूलती आंखोंको चेहरेपर सही जगह फिरसे टांका गया। और घरवालोंने उसे जब बहादुर पिल्लेकी उपाधि दी, तो शम्मी उसकी पीठ सहलाने लगी और पिल्लेने 'भौं-भौं' कहकर सबका शुक्रिया अदा किया। ●

अनुवाद शाखा, विधि विभाग,
राजस्थान सचिवालय, जयपुर

खाना केला.... बड़ा झमेला

छाया : अजीतसिंह

१– क्या बढ़िया हरी छाल का केला हाथ लगा है!

२– अब इसे छीलने की जुगत भिड़ानी चाहिए!

३– लो, भई, छिल गया! मीठा मीठा गप्प!

४– फिर यह कम्बख्त
छिलका आड़े आ गया!

५– लगता है, तरकीब
काम कर गई!

६– मेहनत का फल
मीठा होता है न?

७– दर्द! ओह! पर बाकी
कैसे छोड़ दूं—ऊँऊँऊं!

बंगला कहानी

घर आए मेहमान

kissekahani.com

छह सालका बुकू बाहरके बरामदेमें खेल रहा था। तभी घरके सामने एक रिक्शा रुका। दो मोटी औरतें और बुकूकी उम्रका एक लड़का रिक्शेमेंसे नीचे उतरे। औरतें तो मोटी थीं ही, लेकिन उस लड़केको भी दुबला नहीं कहा जा सकता।

खेल खेलमें उस तरफ नजर पड़तेही बुकू चौंक गया—"अरे बाप रे! रिक्शेकी इतनी छोटी-सी गद्दीपर इनके बैठनेकी जगह कैसे बन गई?"

दोनों महिलाओंमेंसे एक बरामदेमें आई। हंसीसे मुंहको और भी मोटा बनाते हुए बोली, "क्यों रे मुन्ने, पहचाना मुझे?"

बुकूने दोनों हाथ अपने कूल्हेपर जमा लिये और थोड़ी देर सीधा तनकर उनकी ओर देखता रहा। फिर मन ही मन कुछ सोचकर तय किया। उसके बाद बड़ी गंभीरतासे घड़ीके पेंडुलमकी तरह दोनों तरफ सिर हिला दिया।

उसका यह तौर-तरीका देख दोनों महिलाएं हंसते-हंसते लोट-पोट हो गईं।

एकने कहा, "आहा! हम लोग बहुत दिनों पहले आए थे, इसे कैसे याद रह सकता है!"

बुकूने बुद्धिमानके समान कहा, "इसके अलावा तब शायद आप लोग इतनी मोटी भी नहीं होंगी। मैंने तो पहले कभी किसीको इतना मोटा नहीं देखा।"

यह सुनकर दोनोंमेंसे एक महिलाका चेहरा काफी गंभीर हो उठा। दूसरीको हंसी आ गई। खुक्खुक करके हंसते हुए उसने कहा, "निर्मलाका लड़का तो काफी मजेदार बातें करता है। अच्छा, तुम्हारी मां घर पर हैं, मुन्ने?"

"हां।"

"भीतर चलो," कहकर तीनों घरमें घुस आए।

सिर्फ घुस ही नहीं आए, जमकर बैठ गए।

बाहरके कमरेमें बेंतकी कुर्सियोंमें अपनेको किसी तरह जबर्दस्ती धंसाते हुए वे दोनों महिलाएं हांफने लगीं।

"मुन्ने, कहां हैं तुम्हारी मां?"

"मां? मां तो तीसरी मंजिलकी छतपर रसोईघरमें हैं।"

"अरे बाबा!" दोनों घबरा गईं, "तीसरी मंजिल पर? सीढ़ियां चढ़कर ऊपर जानेकी हिम्मत हममें तो नहीं है, बाबा, माफ करो! ऊंह, आज घरसे क्या निकले, दो-तीन बार बसें बदलीं, यहां तक पहुंचनेके लिए आखिरमें रिक्शा भी करना पड़ा.....बेटे मुन्ने, तुम जरा दौड़कर चले जाओ, मांसे कहना.... उत्तरपाड़ासे छेनू मौसियां आई हैं।"

बुकू लपकता हुआ ऊपर चला गया।

इस बीच छेनू मौसियोंके साथ आए उस लड़केने, जिसका नाम डम्बल था, कुर्सीमें फंसनेके बजाए कुहनी मारकर एक कुर्सी उलट दी। मेजपोशको खींचकर इकतरफा बना दिया। टेबुलपर सजी किताबें बिखेर दीं।

—आशापूर्णा देवी

कोनेमें पड़ी अलमारीके एक पल्लेको पकड़कर इतनी जोरका झटका दिया कि हैंडिल उखड़कर हाथमें आ गया। ताकमें तरतीबसे जमी किताबोंमेंसे एक साथ तीन-चार किताबें उतार लीं और 'धत्, तस्वीरें तो हैं ही नहीं' कहते हुए जमीनपर पटक दीं। थोड़ा-सा हुड़दंग मचानेके बाद वह खिड़कीपर बैठ गया और जोर जोरसे पांव हिलाने लगा।

नीचे आकर बूकूने बताया : "मां आ रही हैं।" फिर कमरेकी दुर्दशा और डम्बलकी ओर देखकर बोला, "यह क्या? तुमने यह क्या किया? अलमारी तोड़ दी? किताबें क्यों बिखेरीं?"

डम्बलने लापरवाहीसे बूकूकी ओर देखा। आंखोंको पिटपिट करके टिमटिमाते हुए बोला, "हिष्ट! अलमारी तोड़ी? तुम तो यह भी कह सकते हो कि मैंने अलमारीको पीसकर उसकी चटनी बना दी। अलमारीके जरा-सा हाथ क्या लगा लिया, जीमें आया जैसा बकने लगे!"

बूकूने जोरसे कहा, "तो खोली भी क्यों? जानते हो, ये किताबें किसकी हैं? चाचाजीकी। उनकी किताबें जमीनपर?...उफ्!"

बूकूकी आवाजसे ही लगता था कि उसके चाचाजी कोई बहुत सीधे और मुलायम तबीयतके आदमी नहीं हैं।

लेकिन डम्बल इन गीदड़-भभकियोंसे डरने वाला लड़का नहीं था। होंठ बिचकाते हुए बोला, "इतनी रद्दी किताबें मैंने कभी देखी ही नहीं। एक भी तस्वीर नहीं!"

बूकूने गंभीर होकर जवाब दिया, "तस्वीर किस-लिए रहेगी? क्या ये बच्चोंकी किताबें हैं? यह तो बड़ोंके पढ़नेकी हैं। जैसा हाथीकी तरह चेहरा है तुम्हारा, वैसी ही हाथी जैसी मोटी बुद्धि भी है। अच्छा, आने दो चाचाजी-को, मजा चखा देंगे। तुम्हारी पीठकी खाल उधेड़ देंगे।"

दोनों मोटी औरतोंमेंसे एकका नाम है छेनू मौसी और दूसरीका बेनू मौसी। वे दोनों आंखें फाड़े बूकूकी बातें सुन रही थीं। उनमेंसे एकने गुस्सेसे तिलमिलाकर अपने लड़केको कहा, "डम्बल! किताबें उठाकर रखो। यह अपना घर नहीं है, समझे?"

यह सोचकर कि बस इतनेसे लड़का काबूमें आ गया, दोनों बेफिक्र हो गईं और मन ही मन बूकूकी बुराई करने लगीं। .....कितना बदतमीज लड़का है, बाप रे! बोलता ऐसे है मानो ढेले फेंक रहा हो। निर्मलाने अपने लड़केको कितना सिर चढ़ा रखा है!

तभी बूकूकी मां निर्मला कमरेमें आई। गीले हाथ आंचलसे पोंछनेसे ही मालूम पड़ रहा था कि काममें व्यस्त थी। कमरेमें आते ही छेनू-बेनूके आनेकी खुशी जाहिर करने लगी, "ओ मां, मेरी किस्मत कितनी अच्छी है! छेनू मौसी, बेनू मौसी आई हैं! इतने दिन बाद मेरी

बाद आई? मैंने तो सोचा था कि हमें भूल ही गई होंगी। सचमुच, कितने दिनों बाद मुलाकात हुई है—मुझे कितना अच्छा लग रहा है, कह नहीं सकती। इतना अच्छा लग रहा है छेनू मौसी...''

आश्चर्यमें डूबा हुआ बुकू मुंह खोले, आंखें फाड़े अपनी मांकी ओर ताके जा रहा था। बात पूरी होते ही उसने कहा, ''यह क्या, मां? अभी अभी तो तुमने कहा था—'बाप रे, सुनते ही बदनमें आग लग गई। वक्त-बेवक्त लोग आ टपकते हैं। अच्छा नहीं लगता!'—अब इनके सामने यह क्यों कह रही हो कि बहुत अच्छा लग रहा है?''

अपने लड़केकी बात सुनते ही बुकूकी मांका सिर भन्ना उठा। यह कैसा सत्यानाशी लड़का है! निर्मलाने ओटमें दो बातें कह ही लीं, तो क्या इसका यह मतलब है वह इस तरह सबके सामने बेड़ा गर्क कर दे।

उस तरफ छेनू-बेनू दोनों बहनोंकी दो दुनी चार आंखें मायेपर चढ़ आईं। उन्होंने कहा कि कितनी जोड़-तोड़ करके बहुत मुश्किलसे तो वे अपनी बनाई हुई भांजीसे मिलने उत्तरपाड़ासे भवानीपुर तक आई हैं, इतनी तकलीफ उठानेके बाद उन्हें यह सुननेको मिल रहा है!

बेचारी बुकूकी मांने सिनेमाके टिकट खरीद रखे थे, इस बातका तो इन्हें पता ही नहीं। उसने अपने मेहमानोंके सामने इस बातको प्रकट भी नहीं होने दिया। बुकूकी बातपर झपट्टा मारती हुई बोली, ''तू क्याका क्या सुन लेता है, अभागे! जो मनमें आया, बके जा रहा है!''

छेनू मौसीने धीरे धीरे कुम्हड़ेके समान मुंह फुला लिया और फिर गंभीर आवाजमें बोलीं, ''आहा, बच्चेको गाली क्यों दे रही हो, निर्मला? सच ही तो कह रहा है, बेचारा। बेवक्त आकर हमने तुम्हारे काममें बाधा डाली!''

बुकूकी मांने बेचैन होते हुए कहा, ''कुछ नहीं, मौसी, इस वक्त मेरे पास कोई काम नहीं रहता। अब तो शाम पड़ गई, भला इस वक्त कैसा काम?''

लेकिन बुकूने बात पूरी नहीं होने दी। टपसे बीचमें टपक पड़ा, ''वाह, काम कैसे नहीं है? इसी समय तो ज्यादा काम होता है। हम लोगोंने सिनेमाके टिकट भी तो खरीद रखे हैं, पिताजीके आते ही उनके साथ चले जाएंगे। मां तुम जल्दीसे रोटी-बोटी नहीं बनाओगी?''

बुकू इतना जल्दी जल्दी बोलता है कि उसे बीचमें रोका नहीं जा सकता।

इतना कुछ हो जानेके बाद अगर बुकूकी मां अपने काले लड़केके कानोंको ऐंठकर लाल कर दे, तो इसमें उसे दोषी नहीं कहा जा सकता। कान मलते हुए निर्मला बोली, ''जा, निकल जा, अभागे! सिरपर भूत चढ़ गया है क्या? सचमुच, इस लड़केको जितना भी मारो कम है। तुम लोग ही बताओ, छेनू मौसी, मैं क्या करूं? हर वक्त अपने मनसे बना बनाकर बातें करता है!''

बुकूके बाहर जाते ही उसकी मां डम्बलको ले बैठी, ''अरे डम्बल! अब तक तो देखा ही नहीं था। इतना बड़ा हो गया! और देखनेमें कितना सुंदर लगने लगा! बेनू मौसी, शायद तुम्हारा यही लड़का बाकी सबसे ज्यादा गोरा है?''

यही तो वह स्थिति है जिसमें दूसरेके काले लड़केको भी गोरा और बिच्छूको भी अच्छे बच्चोंका सरदार कहा जाता है। इसके अलावा एक बात यह भी है कि अपने लड़केकी बदतमीजीको भुलानेके लिए इस वक्त उसे डम्बलकी कुछ जरूरतसे ज्यादा ही तारीफ करनी पड़ रही थी। वैसे डम्बल बिल्कुल भी गोरा नहीं था।

इस बार बेनू मौसी थोड़ी खुश होते हुए बोलीं, ''नहीं, भोम्बल भी बचपनमें ऐसा ही था। अब घूममें घूम घूमकर....तुम्हारा बुकू भी तो काला ही गया?''

''बुकू तो शुरूसे ही काला है... हां तो, डम्बल बाबू, पढ़-लिख क्या रहे हो? स्कूल जाते हो?''

बेनू मौसी कुछ कह ही रही थीं कि बीचमें डम्बल टपक पड़ा, ''स्कूलमें भर्ती कराता ही कौन है? मेरे बाबा बहुत कंजूस हैं। कहते हैं—सात सालके लड़केकी स्कूल-फीस सात रुपये है, मैं नहीं दे सकूंगा। पढ़नेकी जरूरत नहीं। खेती-मजदूरी करके पेट भर लेगा।''

अबके बेनू मौसीके चेहरेपर सफेदी पुत गई। छोटे बच्चोंके सामने ज्यादा बात करनेका फल मिल गया। छोटी बहनको संभालनेकी गरजसे 'ही-ही' करके हंसते हुए छेनू मौसीने कहा, ''तेरा लड़का कितनी पकी पकी बातें सीख गया है, बेनू, सुनकर हंसी आती है। बाप रे, खूब बढ़-चढ़कर बातें करता है!''

बेनू मौसीने अपनेको गिरते गिरते बचा लिया। बोली, ''आजकल तो, दीदी, सभी लड़के ऐसे हो गए हैं! अभी देखा नहीं, निर्मलाके लड़के बुकूने दो किताबोंके हाथ लगा देनेकी वजहसे डम्बलको कितना धमकाया था। कहता था—जैसा हाथीकी तरह चेहरा है, वैसी ही हाथी जैसी मोटी बुद्धि है! चाचाजी तुम्हारी पीठकी खाल उधेड़ देंगे—ऐसी बातें करता है।'' बेनू मौसी जोर जोरसे हंसने लगीं।

सुनकर बुकूकी मांकी अक्लपर पत्थर पड़ गए। आज हो क्या गया इस लड़केको? सचमुच भूत-वूत तो सवार नहीं हो गया? कहां, पहले तो कभी इतना मुंहफट नहीं था। वह अब करती भी क्या, रोनी आवाजमें बोली, ''सचमुच, यह लड़का हमें बहुत परेशान करता है। क्या बताऊं, छेनू मौसी, नाकमें दम कर रखा है। जितना बड़ा होता जा रहा है उतना ही बिगड़ रहा है। पता नहीं कहीं पागल-वागल न हो जाए।'' उसने सोचा शायद पागल कह देनेसे उसका दोष दूर हो जाएगा।

लेकिन छेनू मौसियां इतनी बेवकूफ नहीं, जो अच्छे-

'पराग' वैज्ञानिक कहानी प्रतियोगिता

२००० रु. के पुरस्कार

*** प्रथम पुरस्कार १००० रु. * द्वितीय पुरस्कार ६०० रु. * तृतीय पुरस्कार ४०० रु.**

'पराग' मौलिक हिन्दी बाल एकांकियोंके लिए ५००–५०० रु. पुरस्कारकी दो प्रतियोगिताएं सफलताके साथ आयोजित कर चुका है।

हिन्दी बाल-साहित्यमें एक और विधाकी कमी अनुभव की जाती रही है—वैज्ञानिक कहानी। अंग्रेजीका साहित्य इससे समृद्ध है, किंतु हिन्दीके प्रौढ़ साहित्यमें भी इसकी भारी कमी है। विज्ञान और उसकी संभावनाओंके प्रति भारतीय बच्चोंमें कुतूहल उत्पन्न करनेके लिए यह वैज्ञानिक कहानी प्रतियोगिता घोषित की जा रही है। प्रतियोगितामें भेजी जाने वाली कहानियां सर्वथा मौलिक होनी चाहिएं। उसका आधार, वातावरण, कथानक किसी भी विदेशी भाषासे लिया हुआ नहीं होना चाहिए। वैज्ञानिक तथ्योंपर मुक्त कल्पना वांछित है, किंतु बाल-सुलभ मनोरंजन चुनी हुई कहानियोंका प्रधान गुण माना जाएगा। हमें आशा है कि हिन्दीके जिन कथाकारोंने वैज्ञानिक कथा-साहित्यका अनुशीलन किया है वे इस बड़े अनुष्ठानमें हमारा हाथ बंटाएंगे।

नियम

१– कहानी कमसे कम १०,००० से १५,००० (लगभग २५ से ३५ फुलस्केप टाइप पृष्ठ) शब्दोंके बीच होनी चाहिए।

२–मुख्य पात्रोंकी वेशभूषाओं, विशेषताओं आदिका क्रमबद्ध परिचय अलग कागजपर आना चाहिए, जिसके आधारपर उनके चित्र बन सकें।

३–लिफाफेके ऊपर बायें कोनेपर 'पराग वैज्ञानिक कहानी प्रतियोगिता' लिखा होना चाहिए।

४– कहानी अनिवार्यतः अप्रकाशित, अप्रसारित तथा मौलिक होनी चाहिए। अनूदित, रूपांतरित या अन्य भाषाओंके आधारपर लिखित कहानियोंपर विचार नहीं होगा।

५–प्रत्येक कहानीकी पांडुलिपिके ऊपर एक और कोरा कागज अलगसे लगा होना चाहिए, जिसपर लेखकका पूरा पता, कहानीका शीर्षक, भेजनेकी तिथि आदि दर्ज हों। पांडुलिपिके अंतमें भी लेखक-लेखिकाका पूरा पता होना चाहिए।

६– अस्वीकृत कहानियोंको उसी दशामें वापस किया जाएगा, जब कि प्रेषकका पता लिखा व टिकट लगा लिफाफा संलग्न होगा।

७– पांडुलिपि कागजकी एक ओर स्पष्ट, सुपाठ्य व स्वच्छ अक्षरोंमें लिखी अथवा टाइप की हुई होनी चाहिए। कृपया टाइपकी मूल प्रति ही भेजनेका कष्ट करें।

८– समस्त पांडुलिपियां हमें अधिकसे अधिक १५ अगस्त १९६७ तक मिल जानी चाहिएं। पुरस्कार विजेताओंके नाम 'पराग'के नवंबर १९६७ के अंकमें प्रकाशित होंगे। इस प्रतियोगिताके संबंधमें किसी प्रकारका पत्र-व्यवहार नहीं किया जाएगा। अतः पांडुलिपिके साथ कोई पत्रादि न रखें।

९–पुरस्कृत व स्वीकृत कहानियोंका प्रथम प्रकाशनाधिकार 'पराग' का होगा। इसके बाद कापीराइट लेखकका रहेगा।

१०– कहानियां इस पतेपर भेजी जाएं — संपादक, 'पराग' (वैज्ञानिक कहानी प्रतियोगिता), पो. आ. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बम्बई–१।

११–यदि इस प्रतियोगितामें उपयुक्त तथा वांछित स्तरकी कहानियां प्राप्त न हुईं, तो संपादक 'पराग' की एक, दो या तीनों पुरस्कार रोक लेनेका अधिकार होगा।

भले लड़केको पागल कह देनेपर उसीकी बातका विश्वास कर लें। मन ही मन सोचने लगीं—यह बात बिल्कुल गलत है, बल्कि वह तो औरोंको पागल बना सकता है।

अचानक झन-झनाझनकी एक तीखी आवाज सुनकर तीनों चौंक गईं। और कुछ नहीं, शेल्फपर रखे टेबुल लैम्पको नीचे गिराकर चूर चूरकर दिया है डम्बलने। इस बार फिर छेनू-बेनूका मुंह फीका पड़नेकी बारी थी, लेकिन बुकूकी मां आड़े आईं। बोलीं, "अरे रहने दो, बेनू मौसी, लड़केको डांटनेकी जरूरत नहीं। बच्चे मिट्टीके पुतलेकी तरह चुपचाप थोड़े ही बैठे रहेंगे। मुझे तो ऐसे चंचल लड़के ही अच्छे लगते हैं।"

जमीनपरसे कांच बटोरते बटोरते बुकूकी मां आगे बोलीं, "जो बच्चे बचपनमें थोड़ी शैतानी करते हैं, वही आगे जाकर महापुरुष बनते हैं।" (शेष पृष्ठ ४७ पर)

अब तक तुमने पढ़ा था :

गिरीश एक होनहार लड़का था लेकिन बाट-पर्वोड़ीकी लत और घूमने-फिरनेके शौकने उसे कहींका न छोड़ा। मौका हाथ आते ही वह अपने पिताके रुपये उड़ाकर बम्बई जा पहुंचा जहां उसकी मौसी रहती थी और लड़कोंको उड़ाने वाले एक दलके सरदार केहरके हाथ पड़ गया।

केहरकी योजना थी कि वह उस सुंदर लड़केको उड़ाए हुए लड़कोंसे भीख मंगवाने वाले एक दलके सरदारके हाथों बेच दे। लेकिन गिरीश अपनी चतुराई और साहससे उसके चंगुलसे भाग निकला। गिरीशने सोचा था कि अब वह स्टेशनसे गाड़ी पकड़कर सीधे अपने घर भाग जाएगा लेकिन वह फिर केहरके चंगुलमें फंस गया और उसे मजबूर होकरउसके साथ लड़कोंसे भीख मंगवाने वाले उसी गुंडेके यहां पहुंचना पड़ा। वहांके दृश्य देखकर वह हक्का-बक्का रह गया। लो, अब आगे पढ़ो :

(४)

गिरीश जहां पहुंचा उस स्थानपर कई तरहके लोग थे। कुछके कपड़े फटे हुए थे, कुछके पैबंद लगे लेकिन मैले। तीन लोग ऐसे भी थे जिनके कपड़े एकदम उजले थे। उजले कपड़े पहने लोग कुर्सियोंपर बैठे लिखा-पढ़ीका काम कर रहे थे। पैबंद लगे लेकिन मैलेसे कपड़े पहने लोग बेंचोंपर बैठ बातें कर रहे थे। गंदे और फटे कपड़े पहने लोगोंमें कुछ पुरुष थे, कुछ औरतें थीं। बच्चे बहुत ज्यादा थे। उनमेंसे कोई अंधा था, कोई लंगड़ा। किसीका एक हाथ कटा हुआ था, किसीके दोनों हाथ गायब थे।

गिरीशका रोम रोम सिहर उठा। सब उसे एकटक घूरे जा रहे थे। वह समझ गया कि उसे भी इन्हींमें शामिल करने लाया गया है। उससे भी भीख मंगवानेका काम लिया जाएगा। उसके भी किसी अंगको काट देनेकी बारी आएगी। वह रो पड़ना चाहता था लेकिन घबड़ाहट और मजबूरीके मारे रो नहीं सका। वह उदास खड़ा रहा।

केहर बेंचपर बैठ गया। उसने गिरीशसे भी बैठनेको कहा। गिरीश फिर भी खड़ा रहा। उसे घिन आ रही थी। ऐसा लग रहा था जैसे मितली होने वाली हो।

केहरने एक सफेदपोश आदमीसे पूछा, "उस्ताद किस वक्त आएंगे?"

"अभी अभी तो गए हैं," उसने जवाब दिया।

"मुझे काम है; उन्हें बुलाओ," केहरने कहा।

उस सफेदपोश बाबूने घंटीका बटन दबाया। एकाएक एक बल्ब जला और बुझ गया। थोड़ी देर बाद एक दरवाजा खुला और उसमेंसे वही आदमी निकला जिसे गिरीशने सोते समय चुपकेसे आंख खोलकर केहरसे बातें करते देखा था।

आते ही उसने कहा, "रातको क्यों नहीं लाए?"

केहरने जवाब दिया : "यह भाग गया था, बड़ी मुश्किलसे पकड़कर लाया हूं।" उस आदमीने घूरकर गिरीशको देखा, "हूं, काफी चंट मालूम होता है।"

केहर बोला, "जी।"

"कोई बात नहीं, सारे होश ठिकाने आ जाएंगे।" यह कहकर फिर उस व्यक्तिने एक दूसरे आदमीसे कहा, "रहमत, इसे कोठरी नं.–३ में बंद कर दो।"

रहमत उसे लेकर चल पड़ा, उस आदमीने फिर पुकारा, "और सुनो, बढ़िया खाना भी पहुंचा देना।"

kissekahani.com

धारावाही उपन्यास

शेर का पंजा

—अवध अनुपम

गिरीशको कोठरीमें बंद कर दिया गया। यह कोठरी हवादार नहीं थी। बंद दरवाजेके ऊपर ही एक छोटी-सी खिड़की लगी थी, जिसमेंसे बाहरका थोड़ा-सा उजाला आ रहा था।

कोठरीके भीतर पहले कुछ देर तक तो उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। फिर धीरे धीरे आंखें अंधेरेकी अभ्यस्त हो गईं, उसमें उसने देखा कि कमरेमें जमीनपर ही दो बच्चे और सोए हुए हैं।

वह समझ गया। ये दोनों भी शायद मेरी ही तरह लाए हैं। उसकी हिम्मत बंधी। अब वह कुछ तरकीब सोच

निकालेगा। इन दोनोंको भी अपना साथी बनाएगा। पहला काम तो उसने रिवॉल्वर तथा नोटोंको छिपानेकी जगह खोजनेका किया। उसने पूरे कमरेमें निगाह दौड़ाई। कुछ भी तो नहीं था जिसमें छिपा पाता। उसे डर था कि केहरको जब रिवॉल्वरकी याद आएगी, तो वह जरूर भांप जाएगा कि किसने चुराया है। छिपी रकमकी चोरीकी अभी उसे भनक नहीं लगी है शायद, वरना तलाशी जरूर लेता।

कोई जगह नहीं दिखी, तो उसने खिड़कीके आगेकी चार इंच चौड़ी कगारपर ही रिवॉल्वर रख दिया। रकम इसलिए नहीं रखी क्योंकि वहां सुरक्षा नहीं थी। वह कगारपर रिवॉल्वर रखकर उतर ही रहा था कि बाहरसे दरवाजेकी कुंडी खुली। दरवाजेपर तो वह चढ़ा ही था। वह बिना एक क्षणकी देरी किए नीचे उतर आया। रहमत आया और एक बड़ी-सी प्लेट रखकर चला गया। प्लेटमें गिरीशके लिए खाना था।

अब रकम छिपाना रह गया था। उसने पूरे कमरेमें चक्कर लगाया। उसके बाद कहीं जगह न पाकर सोए हुए एक बच्चेके तकिएके ही नीचे सारी रकम रख दी।

तकिया हिलनेसे वह बच्चा जाग गया और सिसक-सिसककर रोने लगा। गिरीशने उसके मुंहपर हाथ रख दिया और फुसफुसाकर बोला, "रो मत, सब ठीक हो जाएगा।"

बच्चा आश्चर्यसे गिरीशको देखता रहा। तभी दरवाजेपर एक बार फिर कुंडी गिरनेकी आवाज आई। गिरीशने उस बच्चेको लेटनेका इशारा किया और खुद खानेकी प्लेटके पास आ बैठा। इस बार एक दूसरे आदमीने प्रवेश किया। बिना कुछ बोले वह गिरीशका हाथ पकड़कर बाहर ले आया।

केहर परेशान था। उसने झटपट गिरीशकी तलाशी लेनी शुरू की। गिरीश चुप-खड़ा रहा अनजान बना हुआ। केहरने डपटकर पूछा, "रिवॉल्वर कहां है?"

गिरीश भी अकड़ गया, "क्या कहा, रिवॉल्वर! मुझे कहां दिया था तुमने?"

"दिया नहीं, तो क्या हुआ, चुराया होगा।"

गिरीशने घूंसा ताना, "खबरदार! जो मुझे चोर कहा।"

केहर चुप रह गया। सच तो है, यह काहेको चुराएगा। उसने सोचा, रास्तेमें देखता हुआ आएगा, कहीं गिर पड़ा होगा।

जिसके पास केहर गिरीशको लाया था वह आदमी बोला, "कुछ भी हो, केहर, यह लड़का है बहुत विकट। इसे पहले बहुत सबक पढ़ाना होगा।"

"धीरे धीरे ठंडा हो जाएगा, उस्ताद, शुरू शुरूमें ऐसा होता ही है," केहरने कहा।

"हां, यह तो बताओ, इसे यहीं रखना ठीक रहेगा या बाहर भेजना। तुम कह रहे थे इसके रिश्तेदार यहां रहते हैं।"

"नहीं, उस्ताद, मैंने खुद जाकर पता लगाया। मालूम हुआ वे बम्बई छोड़ गए हैं।"

प्रति मास दो नए पुरस्कार

बच्चो, इस अंककी कहानियां ध्यानसे पढ़ो और हमें २० जुलाई तक लिखो कि अपनी पसंदके विचारसे कौन कौनसी कहानी तुम पहले, दूसरे, तीसरे आदि नंबरोंपर रखोगे। तुम्हें इस प्रकार सभी कहानियोंपर अपनी पसंद बतानी है। इसमें एकांकी और धारावाही उपन्यास शामिल नहीं होंगे, केवल वे ही कहानियां शामिल होंगी, जिनका उल्लेख 'अतापता' में 'मजेदार कहानियां' के अंतर्गत आया है। जिन बच्चोंकी पसंदका क्रम बहुमतसे मिलेगा, 'पराग' में उन सबके नाम छपे जाएंगे और यदि वे दोसे अधिक हुए, तो लॉटरी द्वारा चुनकर दो बच्चोंको हम सुंदर सुंदर पुस्तकें पुरस्कारमें भेजेंगे। अपनी पसंद एकदम अलग कार्डपर लिखो—'अटपटे चटपटे' आदिके कार्डोंपर नहीं। अपनी उम्र भी अवश्य लिखो। पता यह लिखो—**संपादक, 'पराग (हमारी पसंद—७)', पो. आ. बाक्स नं. २१३, टाइम्स आफ इण्डिया, बिल्डिंग, बम्बई—१।**

सूचना : परागके मई और जून अंकोंके बीच प्रकाशनकी अवधि कम होनेके कारण मई मासकी 'हमारी पसंद' प्रतियोगिताका परिणाम इस अंकके बजाए अगस्त अंकमें घोषित किया जाएगा।

"अच्छा देखेंगे।"

गिरीशने समझ लिया मौसा-मौसी जरूर कहीं चले गए होंगे। उसने सोचा, कोई परवाह नहीं। भले ही वह मर जाए लेकिन भीख मांगने नहीं निकलेगा।

सचमुच एक बार भागनेमें उसे जो कामयाबी मिली थी उससे उसकी हिम्मत बढ़ी हुई थी। उसने जान लिया था कि हिम्मत और हिकमतसे कोई काम भी आसान बनाया जा सकता है।

गिरीशको फिरसे कोठरीमें भेज दिया गया। इस बार गिरीशने कोठरीमें आते ही अंदरकी कुंडी लगा ली। उसने देखा, उसके अंदर पहुंचते ही दोनों बच्चे जाग कर बैठ गए हैं और रुक रुककर सिसकियां ले रहे हैं। गिरीशको इस समय साथियोंकी बहुत जरूरत थी और वह भी इत्तफाकसे उसे मिल गए थे। वह उनके पास जा बैठा।

गिरीशने बहुत धीमेसे पूछा, "तुम लोगोंका नाम क्या है?"

जवाब मिले, "मोहन, सरिता।"

गिरीशने गौरसे देखा। उनमेंसे एक लड़की थी है जो नेकर और कमीज पहने है। उसके बाल भी कटे हुए हैं। गिरीशने पूछा, "मोहन तुम कब आए?"

"परसों।"

"और सरिता तुम कब आई?"

"कल।"

"तुम लोग यहींके रहने वाले हो?"

"हां," दोनोंने कहा।

"सुनो, भाई, हम लोग बहुत बुरे लोगोंके हाथमें फंसे हैं। ये लोग हमको खरीदते हैं ताकि हमारे हाथ-पांव काट दें और सड़कपर भीख मंगवाएं।"

यह सुन दोनों बच्चोंने फिर जोरसे सिसकियां भरनी शुरू कर दीं।

गिरीश फिर बोला, "रोनेसे काम नहीं चलेगा। हमें यहांसे निकल भागनेकी तरकीब लड़ानी होगी। बोलो, तुम लोग हिम्मत करोगे?"

"करेंगे," दोनोंने कहा।

"ठीक, अब हम मौकेकी तलाशमें रहेंगे। मेरा खयाल है कि हम लोग उनकी बातें थोड़ी थोड़ी मानने लगें ताकि हमें कोठरीके बाहर निकलनेका मौका मिले। हमें एकदमसे सब बातें नहीं माननी हैं। वरना ये लोग हमारे भी हाथ-पांव काट देंगे।"

सरिताने पूछा, "बात माननेसे क्यों काटेंगे?"

"क्योंकि ये लोग यह समझेंगे कि हम भीख मांगनेको तैयार हो गए हैं। अगर हम थोड़ी अकड़ दिखाएंगे, तो ये लोग समझेंगे अभी हमें बाहर भेजना ठीक नहीं।" गिरीश इस समय उन दोनोंमें बड़ा था। मोहनकी उम्र करीब १२ सालकी और सरिताकी करीब १०-११ साल थी।

मोहनने कहा, "अगर हमें ये बाहर भेजेंगे, तो हम भाग चलेंगे।"

"हाथ वगैरा कहीं काट दिया तो! हम लोग बेकार हो जाएंगे न?"

"हां, यह बात तो है।"

गिरीश, मोहन और सरिताकी तिकड़ी तैयार हो गई। तीनोंने हाथ मिलाकर तय किया, जैसे भी हो यहांसे भागेंगे। गिरीशने मोहनको इस कामपर लगाया कि वह बाहर निकलनेके रास्तोंकी खोज करे। सरिताका काम यह हुआ कि वह जब-तब छुपकर सारी बातें सुने। गिरीशने अपने लिए भी कई काम चुने।

प्लेटमें आया खाना तीनोंने मिलकर खाया। मोहनने आवाज लगाई: "दरवाजा खोलो, मुझे जरूरत है।"

दो बार किवाड़ पीटनेके बाद दरवाजा खोला गया। खोलने वालेने कड़ककर कहा, "क्या शोर मचा रखा है?"

गिरीश गरजकर बोला, "तो क्या कोई वक्त पड़नेपर बाहर नहीं निकलेगा। मैं कहता हूं दरवाजा बंद मत करो।"

दरवाजा जिसने खोला था उसका नाम गनपत था। वह बहुत मोटा था और हर समय वहींपर चौकीदारी करता था। गिरीशके गुस्सेपर वह बिफर गया, "ए रे कलके छोकड़े, चीं-चुपड़ मत कर, वरना जमीन पे दे

मारूंगा ।"

गिरीश आगे बढ़ा और गरजकर बोला, "है हिम्मत? देखूं तो!" और एक घूंसा तानकर गनपतकी नाकपर दे मारा । गनपत बौखला गया । उसने बगलमें हाथ डालकर गिरीशको ऊपर उठा लिया । गिरीश गुस्सेमें आकर गरज तो उठा था और घूंसा भी मार दिया था लेकिन अब समझ गया कि यह राक्षस जमीनपर पटके बिना नहीं रहेगा । उसने अपना शरीर पूरी तरह तान लिया । उसके शरीरकी अकड़नसे गनपतकी ताकत कम पड़ गई। गिरीशने हवामें उठे हुए ही एक उछाल और मारी और इसके साथ ही अपने पैर उसके मुंहपर दे मारे ।

गनपत बिलबिला गया । उधर मोहन और सरिता पहले तो अवाक् खड़े रहे, बादमें उन्होंने भी गनपतके पेट और पीठमें मुक्के मारने शुरू कर दिए ।

हड़बड़ाकर गनपतने गिरीशको छोड़ दिया, गिरीश सावधान था पैरोंके बल जमीनपर टिक गया । मोहन और सरिताके मुक्के चालू थे । गनपत भाग खड़ा हुआ । तीनों उसके पीछे पीछे भागे ।

बात यह थी, उस समय सब बच्चे भीख मांगने जा चुके थे । हिसाब-किताबका काम करने वाले भी वहां नहीं थे । बाकी लोग भिखारियोंकी चौकसीमें गए थे । गनपत ही अकेला वहां था । वह इधर-उधर भागता फिरा बच्चोंसे । गनपत भाग रहा था और कह रहा था, "देखो कहे देता हूं एक-एककी खाल सूतवा लूंगा । अब भी मान जाओ, अब भी मान जाओ!" बच्चे फिर भी उसे घेरनेको घूमते रहे । आखिर हारकर गनपत दो नंबरकी कोठरीमें घुस गया और अंदरसे दरवाजा बंद कर लिया ।

गिरीशके दिमागमें एक बात आई । उस्ताद कहलाने वाला आदमी एक नंबरकी कोठरीसे आया था, वह दो नंबरमें गया । क्यों न दोनों कोठरियोंके दरवाजेकी कुंडियां लगा दी जाएं । हुआ भी यही । दरवाजोंकी कुंडियां लगा दी गईं । अब वहां तीनों बच्चोंका एकच्छत्र राज्य था ।

मेजोंकी एक एक दराज खोलकर देखी गई । कोई खास चीज नहीं मिली । दो-चार कोरे कागज पड़े थे । एक टूटी कलम पड़ी थी । एक सादा लिफाफा भी मैला-कुचैला-सा पड़ा था । गिरीश शायद इन चीजोंकी तलाशमें था । उसने मोहनसे कहा, "यह चीजें संभालके अपनी कोठरीमें रख आओ, बिस्तरेमें छिपा देना ।"

उसके बाद फिर मुआयना शुरू हुआ । वहीं एक तरफ नल लगा था, तीनोंने पानी पिया । मोहन जिस जरूरतसे बाहर निकला था, वह जरूरत गनपतसे मारा-मारीमें भूल गया था । अब उसने बाल सुलभ प्रतिकारके रूपमें उस्तादकी कुर्सीपर थूक दिया । गिरीश और सरिता दोनों हंसे ।

फिर वे तीनों बैठकर बातें करने लगे । उसी समय एक ग्यारह-बारह वर्षका लड़का बैसाखियोंका सहारा लिये मैले चीकट पकड़े पहने वहां पहुंचा । गिरीशने आश्चर्यसे पूछा, "तू कहांसे आया रे?"

वह हकलाकर बोला, "मैं....मैं तो यहीं रहता हूं ।"

(शेष पृष्ठ ५१ पर)

छोटी छोटी बातें--

--सिम्स

"जब नुकसान में चल रहा है, तो अपना होटल बंद क्यों नहीं कर देते?"

"यह कैसे हो सकता है? बाहर खाने के लिए मेरे पास पैसे कहां हैं?"

kissekahani.com

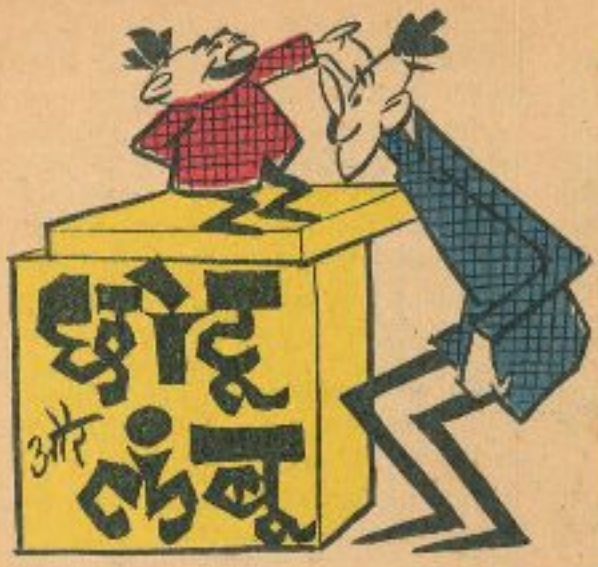

तो फिर हमें अब कोई ऐसा काम न करना चाहिए कि कुदरत को रोना पड़े, फिर वर्षा हो और पहले की तरह हमारा मकान फिर गिरे!
ठीक है, यार!
लोग हमारा साथ दें या न दें, हम तो साधू महाराजकी बताई राह पर चलेंगे — अब हम लोगोंसे ज्यादा मिलना-जुलना बंद करेंगे ताकि हमसे न कोई अनुचित काम हो, न कुदरत को रोना पड़े!
और उस दिन से छोटू-लंबू घर पर ही हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते...
दहकते हुए सूरज और गर्मीसे सब परेशान थे, लेकिन खुश थे, तो छोटू-लंबू!
सहसा एक दिन...
अरे बाप रे, लंबू, हमारी साधना के बावजूद कुदरत क्यों आंसू बहाने लगी?
इस लिए कि तुम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हो और हराम की खाना चाहते हो — मैं कब तक तुम्हें कर्ज देता रहूंगा — आज मैं सारे पैसे लेने आया हूं!

kissekahani.com

जीने की कला – १०

सबसे भले विमूढ़

– अलकारानी जैन

एक कहावत तुम लोगोंने सुनी होगी : 'सबसे भले विमूढ़, जिन्हें न व्यापे जगत्-गति!'

इसमें बड़ी गूढ़ बात है। मान लो किसीको यह पता लग जाए कि अमुक तारीखको अमुक समय उसका इस संसारसे कूच होने वाला है, तो वह क्या करेगा? किसी किसीका तो डरके मारे पहले ही दम निकलनेको हो जाएगा। कोई आधा पागल हो जाएगा। कोई राम-नाम जपना शुरू कर देगा। कोई सात तालोंके भीतर बंद होकर बैठ जाएगा, जिससे मौत उसके पास तक न फटक सके।

इसके विपरीत, कुछ बहादुर ऐसे भी होते हैं जो पहलेसे ही आने वाले समयके स्वागत करनेका प्रबंध करते हैं। वे अपने आपको उस समयके लिए तैयार करते हैं। अपने काम-धंधेको इस तरह संवारते हैं कि समय भले ही उन्हें इस संसारसे उठा ले, उनके बिना उनका कोई काम रुकता नहीं है। एक विद्वानने कहा है : 'पढ़ो-लिखो इस तरह मानो तुम्हें हमेशाके लिए जीना है, जियो इस तरह मानो कल ही तुम्हारा डब्बा गोल होने वाला है।'

पढ़ाई के बाद

यह सिर्फ बातकी बात है। मौत और जिंदगी बहुत बड़ी चीजें हैं। हमें इनके बारेमें बात नहीं करनी है। इस संसारमें शायद ही कोई बदकिस्मत ऐसा होता होगा, जिसे अपनी मृत्युके बारेमें सही पता रहता होगा। हां, कुछ अन्य बातें ऐसी जरूर होती हैं, जिनके बारेमें हर किसीको मालूम रहता है। उदाहरणके लिए, हर समझदार विद्यार्थीको यह पता रहता है कि पढ़ने-लिखनेके बाद उसे या तो कोई व्यापार करना पड़ेगा, या उद्योग-धंधेमें अपने आपको लगाना होगा, या फिर नौकरी ही करनी होगी।

बरसात आनेसे पहले लोग छाते, रबड़के बूट, बरसातियां आदि खरीदते हैं या पिछली बरसातसे बची हुई ये चीजें संदूकोंसे बाहर निकाली जाती हैं। चींटियां और पशु-पक्षी जाड़ेके लिए चारा इकट्ठा करके रखते हैं। संसारका हर प्राणी आने वाले कलकी चिंता रखता है।

मेरा यह विश्वास है कि यदि किसी विद्यार्थीको आगे चलकर किसी अपने काममें भी लगना है, तो पहले उसे उसी कामके किसी प्रतिष्ठित स्थानपर नौकरी करनी चाहिए। इससे उसे यह पता चलेगा कि उसके नियोजक उससे क्या चाहते हैं, उस कामको सुचारु रूपसे चलानेके लिए उसके कर्मचारियोंमें क्या क्या गुण होने चाहिएं।

आजकी इस हड़बड़ और आंदोलनोंवाले समयमें बहुत कम विद्यार्थी ऐसे होंगे, जिन्हें यह मालूम होगा कि बड़ी बड़ी कम्पनियोंमें किसी कर्मचारीको लेते समय, उसके डिप्लोमा और डिग्री आदिको छोड़कर, अन्य किन गुणोंपर तेज निगाह रखी जाती है। उसकी योग्यताका मापदंड केवल डिग्री नहीं होती। वह केवल पहली शर्त होती है। उसकी योग्यता कुछ अन्य गुणोंसे जांची जाती है और उसका रिकर्ड रखा जाता है। समय आनेपर इस रिकर्डको देखकर ही उसकी तरक्कीकी सिफारिशें ऊपर पहुंचाई जाती हैं।

इस बातकी ओर तुम लोगोंका ध्यान अभीसे दिलानेकी आवश्यकता इसलिए पड़ी कि ये गुण इच्छा होते ही एक दिनमें पैदा नहीं किए जा सकते। ये छात्र-जीवनसे ही विकसित होते हैं। जो छात्र समय आनेसे पहले ही इनका ध्यान रखते हैं, उन्हें कुसमय बहुत कम सताता है। अक्सर उनका भविष्य उनके अपने हाथोंमें रहता है।

पहला गुण : पहलकदमी

जब किसी अच्छी जगहके लिए कुछ उम्मीदवारोंको बुलाया जाता है, तो चुनाव कमेटीके लोग इस बातकी ओर विशेष ध्यान रखते हैं कि जब उम्मीदवारको सर-

कुछ उम्मीदवार इंटरव्यूमें पूछे गए प्रश्नोंका उत्तर ऐसे देते हैं मानो भीख रहे हों!

बिस मिल जाएगी, तो अपना काम करनेके लिए उसे हांकना पड़ेगा या वह स्वयं उसमें दिलचस्पी लेगा। मान लो हांकना भी न पड़े, तो फिर वह अपना काम बीरबलकी तरह करेगा या सिर्फ घोड़ेको पानी 'दिखा' कर लाएगा। मान लो बीरबलकी तरह ही करने वाला हो, तो फिर नित्य-प्रति नई सूझ-बूझके साथ करेगा या सामान्य कुशलतासे ही संतोष कर लेगा।

अब तो तुम समझ ही गए होगे कि बिना हांके, बीरबलकी तरह एककी जगह सवा काम करके दिखानेका उत्साह और अपने काममें अपनी सूझबूझ इस्तेमाल करनेको ही पहलकदमी कहते हैं। इसकी आवश्यकता न केवल नौकरियोंमें ही पड़ती है, बल्कि स्वयं अपने व्यापारमें भी पड़ती है। कभी कभी इस एक गुणकी कमीके कारण ही अच्छीसे अच्छी पूंजीका व्यापार भी ठप्प हो जाता है।

तुम चाहो तो अपना मन टटोलकर देखो, तुम अपनी पढ़ाई पहलकदमीके साथ करते हो या हांकनेपर।

दूसरा गुण : सहकार भावना

तुमने शायद इस शब्दको अपनी कक्षाओंमें, खेलके मैदानमें कहीं सुना हो—टीम स्पिरिट।

पुराने जमानेमें ऐसे ऐसे कारीगर होते थे, जो किसी चीजको बनानेके लिए पीर-बावर्ची-भिश्ती-खरका सारा काम खुद करते थे। अगर उन्हें कपड़ेका थान बुनना है, तो उसका सूत कातनेसे लेकर मांडी देने तकका सारा काम एक-दो आदमी कर लेते थे।

आजके हमारे वैज्ञानिक युगमें हर काम हजारों हिस्सोंमें बांट दिया गया है। कपड़ेकी बड़ी मिलके चरखेमें तेल कोई देगा, तकुए और शटल कोई दूसरा साफ करेगा, रूई कोई चुनेगा, साफ कोई दूसरी मशीन करेगी, कातेगा एक, तो बुनेगा दूसरा और मांडी देगा तीसरा और तह करेगा चौथा—और इनमें भी अनेकानेक पुर्जे होते हैं। कपड़ा-उत्पादनके काममें लगा हरेक आदमी एक पुर्जेकी तरह काम करता है। हर पुर्जेका काम छोटा होते हुए भी, दूसरोंके साथ मिलकर बड़ा हो जाता है। तब, मान लो कोई पुर्जा ऐसा जिद्दी या कामचोर निकल आए कि बिना दूसरे पुर्जेके महत्वका ध्यान किए, अपनी ही 'मैं' में अड़ा रहे; इस तरह काम करे कि उससे दूसरोंको काम आगे बढ़ानेमें सहूलियत होनेके बजाए दिक्कत पेश आए; अपनी कारगुजारी दिखानेके लिए दूसरे साथियोंके कामोंमें बेमतलब नुक्स निकालनेकी कोशिश करे—तो कहेंगे कि उस पुर्जेमें टीम स्पिरिट नहीं है। वह मशीनकी प्रकृतिको मैच नहीं करता, इसलिए निकाल बाहर करो।

जो विद्यार्थी आए दिन अपनी कक्षामें कक्षाके साथियों या अध्यापकोंके साथ एक न एक रार उठाए रखते हैं, उनमें वह सहकार भावना नहीं होती, जिसके बलपर अच्छी सरविसोंमें उम्मीदवार चुने जाते हैं। सिफारिशोंके बलपर यदि ऐसा कोई व्यक्ति चुन भी लिया जाता है, तो वह तरक्की नहीं कर पाता और जीवनभर निराशाओंका शिकार रहता है।

ऐसे भी विद्यार्थी हैं यदि उन्हें जरा-मोटा भाषण देना पड़ जाए, तो उनकी टांगें कांपने लगती हैं

दूसरोंके साथ मिल-जुलकर काम करना, पिछड़े हुए सहयोगियोंको अपने साथ लेकर चलना, आवश्यकता पड़नेपर उनके काममें सहायता करना, उनके कामके महत्वको यथारूप समझना—सहकार भावनाके ये गुण किसीमें जरूरत पड़नेपर एक दिनमें पैदा नहीं होते। इनके पीछे बचपन और छात्र जीवनके लंबे संस्कार होते हैं।

अपने मनको टटोलकर देखो कि क्या तुम अपने भीतर ऐसे संस्कार पैदा करनेकी कोशिश कर रहे हो, जो तुम्हें आगे चलकर अपनी जगह श्रेष्ठ सिद्ध करेंगे।

तीसरा गुण : कौशल

आमतौरसे जो छात्र ऊंची और अंतिम कक्षाओंमें होते हैं वे अपना भावी काम मन ही मन चुन लेते हैं। जिन्हें आगे पढ़ना होता है उन्हें भी उसी कामके हिसाबसे विषय चुनने होते हैं, जिसमें वह आगे चलकर लगने वाला है। कभी कभी अललटप हिसाब भी चलता है। बिना योजनाके भी अंतिम परीक्षा पास कर ली जाती है। लेकिन ऐसा तभी होता है, जब यह निश्चित नहीं होता कि विद्यार्थीकी अपनी कोई विशेष रुचि भी है।

जिस तरह अच्छा विद्यार्थी वह निकलता है, जो अपने पाठ्यक्रमके विषयोंपर उपलब्ध बाहरी पुस्तकें भी खूब पढ़ता है, उसी तरह आगामी जीवनके काम या नौकरी या व्यापारमें सफल वही व्यक्ति होता है, जो उस विषयमें दूसरोंसे बढ़कर कौशल हासिल कर लेता है। यहां तक कि अगर उसने दुकानदार बननेका ही निश्चय किया हो, तो उसे सैल्समैनशिपपर अच्छी पुस्तकें पढ़नी चाहिएं और अध्ययन करना चाहिए कि मालकी बिक्री बढ़ाने और ग्राहकोंको अपनी ओर खींचनेके क्या तरीके होते हैं।

कई एक झगड़ालू किस्मके लोग तो अकेले कौशलके बलपर ही अपनी जगह टिके रह जाते हैं। यद्यपि अन्य गुणोंके अभावमें वे पर्याप्त उन्नति नहीं कर पाते, किंतु

(शेष पृष्ठ ५५ पर)

kissekahani.com

कहानी

पुराने ज़माने में

—अवतारसिंह

जब धोबीका धोबनपर जोर नहीं चलता, तो वह गधेका कान ऐंठता है; कुछ ऐसी ही बात दादाजी-के साथ भी हुई। वह चाहते थे कि बच्चे उनके दबदबेमें रहें, पर बच्चे उनसे बहाना बनाकर ऐसे बच निकलते जैसे हाथ लगी जिंदा मछली फिसल जाती है। हारकर दादाजी चुप हो रहे और बच्चोंको छोड़कर जमानेको दोष देने लगे।

डैडी दफ्तरसे आकर अभी बूट ही खोल रहे थे कि पिंकी उनकी गोदमें चढ़ गई और हंसते हुए बोली, "डैडी, आज हमने मास्टरजीको बेवकूफ बना दिया!"

"कैसे, बेटी?"

"मधुने उनकी कुर्सीके पायोंके नीचे छोटे छोटे गुब्बारे हवा भरकर रख दिए। मास्टरजी आकर उसपर बैठे ही थे कि धड़से गुब्बारे फूट गए। डरकर मास्टरजी यू उछले जैसे किसीने नीचे एटम-बम छोड़ दिया हो।"

डैडी हंसने लगे। दादाजी पास बैठे उदासीनतासे सब सुनते रहे। हंसना तो दूर, उनके चेहरेपर मुसकराहट तक न आई। डैडीने उनसे कहा, "पिताजी, देखी बच्चोंकी करतूत?"

दादाजी और भी उदास होकर बोले, "जमानेकी हवा ही ऐसी है। हमारे जमानेमें मास्टरजीका इतना डर होता था कि स्कूलके बाहर भी फर्लांग भर दूर मास्टरजीको खड़ा देखकर लड़कोंका खून सूख जाता था। थर थर कांपने लगते थे। जब अब बच्चोंको मास्टरका डर ही नहीं है, तो पढ़ेंगे क्या खाक! आजकलके बच्चे तो समझते हैं, हम सब कुछ मांके पेटसे सीखकर आए हैं!"

अगले दिन सवेरे डैडी अखबार पढ़ते पढ़ते नाश्ता बनाती मम्मीसे बोले, "लो, भई, अमरीकाने वियतनाममें नापाम बम भी बरसान शुरू कर दिए।"

"यह नापाम बम क्या बला है?" दादाजीने पूछा।

"बड़ी बुरी बला है, पिताजी। ऐसा बम है कि सौ मीटर दूर पड़ा लोहेका ढेर पिघला देता है।"

"सच!" दादाजीकी आंखें फैल गईं। कुछ रुककर बोले, "जमाना एकदम बदल गया है। बम हमारे जमानेमें भी बनते थे। ब्याह-शादियों-में हमने छोड़े भी खूब। पर उनसे कभी किसीको नुकसान नहीं पहुंचा। आजकल तो नापाम बम, एटम बम और जाने कैसे कैसे बम बना रहे हैं ये लोग?... ससुरा जमाना ही बुरा आ गया है!"

बात बातपर जब दादाजी वर्तमान जमानेकी तुलना पुराने जमानेसे करने लगते हैं, तब तीनों

बच्चोंको अपना जीवन ही व्यर्थ लगने लगता है। वे सोचते हैं, काश, हम दादाजीके जमानेमें पैदा हुए होते, जब पैसे गज कपड़ा, दो पैसे सेर बरफी, आनेके तीस रसगुल्ले मिलते थे। आज बच्चोंका ध्यान गोलगप्पोंकी ओर गया कि इस हिसाबसे गोलगप्पे तो पैसेके दो-ढाई सौ आते होंगे। इतने गोलगप्पे एक साथ खाता कौन होगा? बच्चोंको लगा दादाजी गप्प मारते हैं।

"दादाजी, आपके जमानेमें गोलगप्पे तो पैसेके दो-ढाई सौ आते होंगे?" राजू पूछ बैठा।

"बिलकुल!"

"तो आप इतने गोलगप्पे खाते कैसे थे? पैसेके टुकड़े तो किए नहीं जा सकते!" किसी वकीलकी तरह राजूने जिरह की।

"अरे नहीं, बेटा, हमारे जमानेमें पैसेकी वह कीमत थी, जो आजकल दस रुपयेके नोटकी है। पैसा तो हमने कभी खर्चा ही नहीं। पैसेसे भी छोटे सिक्के थे—धेले, पाइयां। मां एक पाई गोलगप्पेवालेको पकड़ाती थी और अड़ोस-पड़ोस तकके बच्चे भी जी भरकर गोलगप्पे खाते थे।"

बच्चोंकी शंका दूर हो गई। इसके बाद पुराना जमाना उनपर कुछ इस तरह हावी हुआ कि कोई भी चीज खरीदते, उस जमानेको जरूर याद कर लेते।

"पिंकी, दादाजीके जमानेमें दो दस्तेकी एक कापी पैसेमें मिलती होगी?"

"पैसेमें एक? इतनी महंगी? अरे नहीं पैसेकी छह मिलती थीं," पिंकीने पूरे विश्वासके साथ कहा।

बच्चोंको लगता था कि इस जमानेमें पैदा होकर उन्होंने भयंकर भूल की है। डैडीने तो खूब मजे लूटे होंगे। पैसा भी जेब-खर्च मिलता हो, तो हलवाईकी आधी दूकान खरीदी जा सकती थी। पर एक दिन उन्हें पता लग गया कि दादाजी जिस जमानेकी चर्चा करते हैं वह तो डैडीने भी नहीं देखा।

पहली तारीख थी। मम्मी बाजारसे सामान लेकर लौटीं, तो डैडीसे बोलीं, "लो जी, वनस्पति घी फिर महंगा हो गया। सुपर बाजारवालोंने भी पांच रुपये पांच पैसे किलो कर दिया।"

"हुत्त...भला हो इस सरकारका। यह महंगाईका चक्र अब रुकता नहीं लगता," हताश होकर डैडी बोले।

दादाजी बोले, "जमाना ही बिगड़ गया है। तुम्हें याद है कि हमारे जमानेमें आठ आनेमें बीस सेर देशी घीका कनस्तर मिल जाता था।"

मम्मी चौंक पड़ीं। डैडी बोले, "पिताजी, इतना सस्ता तो नहीं आता था। बीस रुपयेका कनस्तर तो मां जरूर लेती थीं।"

दादाजीको इस प्रतिवादकी आशंका नहीं थी। बोले, "रामलाल, मैं तेरे जमानेकी नहीं, अपने जमानेकी बात कर रहा हूं, जब मैं राजू जितना था।"

डैडी चुप हो गए। बच्चोंकी हंसी मुंहमें ही दबी रह गई।

उस दिन तीनों बच्चे चुपचाप अपने कमरेमें कालीनपर बैठे 'घरका काम' कर रहे थे। जाने कहांसे एक बड़ा-सा चूहा आकर उनके बीचमें ठहर गया। तीनों बच्चे स्लेट फेंककर सहमे हुए उठ खड़े हुए। राजूने चूहेको भगाना चाहा, तो वह पिंकीकी ओर बढ़ा। पिंकी चीखी, चूहा मुन्नूकी ओर मुड़ गया। मुन्नू चिल्लाया, तो चूहा वापस पिंकीकी तरफ आ गया। पिंकी और जोरसे चीखी, तो चूहा राजूकी ओर बढ़ा।...कमरा बच्चोंकी चीख-पुकारसे भर गया। आखिर चूहा राजू और पिंकीके बीचमेंसे निकला और दरवाजेसे बाहर जाकर गायब हो गया।

दादाजीने कमरेमें प्रवेश किया। पूछा, "क्या हुआ है तुम लोगोंको? चीख क्यों रहे थे?"

पिंकी दादाजीसे लिपट गई। बोली, "हाय! दादाजी, एक मोटा हट्टा-कट्टा चूहा आकर हमें डराता था। हाय राम...कितनी डरावनी काली काली आंखें थीं! मेरे बिल्कुल पैरके पाससे गुजरा। मेरी तो जान ही निकल गई थी।"

"चूहा न हुआ, सांप हो गया! सब ससुरे वनस्पति घीकी करामात है। इस जमानेमें बच्चोंको देशी घी भी नहीं मिल सकता।"

दादाजी झल्लाए जरूर, पर सदाकी तरह बच्चोंकी बजाय उन्होंने जमानेको दोष दिया! कुछ देर वह खड़े खड़े अपना जमाना याद करते रहे। फिर बोले, "हमारे जमानेके लोग बल्लम लेकर शेरसे भिड़ जाते थे।"

"असली शेरसे न, जैसा सरकसमें होता है?" मुन्नूने अविश्वाससे पूछा।

"हां, और मैं क्या मिट्टीके खिलौनोंकी बात कर रहा हूं," दादाजी कुछ नाराज होकर बोले। फिर वह कालीनपर बैठ गए। बच्चोंने भी अपने अपने आसन संभाले। इस समय वे पढ़ना चाहते थे पर...दादाजीने पूछा, "नेताजीके बारेमें तुम लोग क्या जानते हो?"

"दादाजी, आजकल तो सभी लोग नेता बने घूमते हैं...आप किस नेताकी बात पूछ रहे हैं?" राजूने पूछा।

"किस नेताकी बात कर रहा हूं, यह पूछते हुए भी शर्म आनी चाहिए। उस महापुरुषको तुम लोगोंने इतनी जल्दी भुला दिया," दादाजी एकदम भड़के। जोशमें बोले, "हमारे जमानेमें केवल एक नेता था—नेताजी सुभाषचंद्र बोस। तुम लोग समझते हो, कोसकी किताबोंमें सब कुछ होता है। तुम्हारी इन किताबोंमें तो ज्ञानका सौवां हिस्सा भी नहीं। कभी तुम लोगोंने महापुरुषोंकी जीवनियां पढ़नेकी कोशिश की? नहीं। पर असली शिक्षा हम महापुरुषकी जीवनियोंसे ही ले सकते हैं। मैंने लायब्रेरीसे नेताजीकी जीवनीपर एक किताब मंगाई है। तुम तीनों उसे पढ़ डालो। नेताजी जैसा दृढ़ निश्चयवाला इस जमानेमें हमारे देशमें होता, तो क्या मजाल थी अमरीकाकी जो हमपर दबाव डालता।"

"दादाजी अमरीका हमपर कैसा दबाव डाल रहा है?" मुन्नूने बीचमें जिज्ञासा प्रकट की।

बिना पल भर सोचे दादाजी अपनी धुनमें कहते गए, "तुम्हें दबावका नहीं पता? तुमने विज्ञानकी किताबमें पढ़ा नहीं कि वायु दबाव डालती है? कभी किताब खोलकर देखी है?"

"हां, दादाजी, वायुका दबाव सात किलोग्राम प्रति वर्ग इंच होता है," पिंकीने बताया।

"वैरी गुड। अमरीका भी वायुकी तरह भारतपर दबाव डाल रहा है। इस तरह हमपर

दबाव बढ़ जाएगा। दबाव बढ़नेपर क्या होता है, जानते हो?"

"डिब्बा पिचक जाता है," मुन्ने एकदम बोला। उसे यह प्रयोग याद था। यह डर भी था कि पिंकी उससे पहले बोलकर सारा यश न लूट ले।

"गुड! तो तुम्हें पता है कि भापसे भरे डिब्बेपर पानी डालनेसे वह पिचक जाता है। क्योंकि बाहर दबाव बढ़ जाता है। अरे...!" अचानक दादाजी चौंके, "हम कहांके कहां पहुंच गए, मैं तो तुम्हें नेताजीके बारेमें कुछ बता रहा था!"

"जी हां," तीनोंने स्वीकार किया।

"पर, क्यों?"

तीनों चुप रहे।

"याद आया। तुम लोग चूहेसे डर गए थे। हमारे नेताजीने एक फौज बनाई थी अंग्रेजोंसे लड़नेके लिए। फौजका नाम था—आजाद हिन्द सेना। उसमें तुम्हारी जैसी उम्रके बच्चोंकी पलटनें भी थीं। वे बच्चे भालेके सहारे टैंकोंसे भिड़ गए थे। नेताजीके एक इशारेपर हम मरने-कटनेको तैयार हो जाते थे।"

'हम' शब्द सुनकर बच्चे चौंक पड़े।

"आप! आप उस फौजमें थे, दादाजी?" राजूने फटी फटी आंखोंसे उनकी ओर देखते हुए पूछा।

"तुम लोग समझते क्या हो मुझे? मैं उनकी बाल-सेनामें कमांडिंग अफसर था। सारे आर्डर मुझसे होकर बच्चोंकी पलटन तक जाते थे। मैं अपने बारेमें कभी डींग नहीं हांकना चाहता। तुम लोग कहोगे—बूढ़ा बक रहा है; बकने दो।"

"नहीं नहीं, दादाजी, हमने तो ऐसा कभी नहीं कहा, सोचा भी नहीं," गद्गद् स्वरमें राजूने कहा। राजू और मुन्नेके सिर श्रद्धासे झुक गए। दादाजी इतने बड़े आदमी रह चुके हैं!

दादाजीने आगे कहा, "नेताजीकी अंतिम आज्ञा हमें आसाममें मिली थी—'बच्चो, बहुत हो चुका। अब अपने घरोंको लौट जाओ। तुम्हारे खूनसे अंग्रेजोंका सिंहासन डोल उठा है। तुम्हारा यह बलिदान व्यर्थ नहीं जाएगा। अब अंग्रेज यहां टिक नहीं सकेंगे।' हुआ भी यही। अंग्रेजोंको जाना पड़ा। नेताजीके लगाए वृक्षकी छायामें आज हम बैठे हैं। उन्होंने ही आजादीका पौधा लगाया था। नेहरू, गांधीजीने तो उस पौधेको केवल सींचा है," कहकर दादाजी चुप हो गए।

पिंकी, जो अब तक बड़ी तल्लीनतासे उनकी बात सुन रही थी, बोली, "दादाजी, एक छोटी-सी गल्ती आपसे हो गई। आप आजाद हिन्द सेनाकी बाल पलटनमें नहीं, किसी ब्रिगेडके कमांडिंग अफसर रहे होंगे। नेताजीने यह सेना कुल पच्चीस वर्ष पहले बनाई थी। उस समय आप चालीस-पैंतालीस वर्षके तो होंगे ही?"

दादाजीकी सूरत एकदम दर्शनीय बन गई। झल्लाते हुए वह बोले, "तो तुमने भी नेताजीकी जीवनी पढ़ रखी है! क्या जमाना आ गया है—पैदा होते नहीं कि जीवनियां पढ़ने लगते हैं। एक हमारा जमाना था कि पच्चीस बरसके होने पर भी 'क' से 'ख' नहीं आता था!"

जब तक दादाजी समझें कि क्या से क्या कह गए, बच्चोंने हंसना शुरू कर दिया। तभी दादाजीको कोई काम याद आ गया और वह झपाकसे कमरेसे बाहर निकल गए! ●

९/६७०३ देवनगर,
नई दिल्ली–५

कुंदन की कुंडलियां

रिजल्ट

जेब-खर्च ठप हो गया, कुंदन का इस बार,
चाट-पकौड़ी देखकर, टपके मुंह सों लार!
टपके मुंह सों लार, चित्त चिउड़े में अटक्यो,
रसगुल्ले के लिए फिरै मन भटक्यो भटक्यो।
कह 'कुंदन' कविराय, दया टीचर को आई;
कापी में लड्डू ही लड्डू दिए लुटाई!

मुंह-दिखाई

हुए पांचवी क्लास में, फेल पांचवीं बार;
कैसे शकल दिखाएं घर—करने लगे विचार।
करने लगे विचार, सोच में गहरे डूबे;
मुंह पर कपड़ा ढांप, रात खिड़की से कूदे!
कह 'कुंदन' कवि हमें चोर समझें सब घर में;
शकल देखने योग्य बना डाली पल भर में!

—कुंदन

kissekahani.com

रोचक हास्य कथा

जान

दादा मेंढक अब बूढ़े हो चुके थे, इसलिए वह अब शिकार न कर पाते थे और अपना पेट मक्खियां मारकर भरा करते थे।

दादा मेंढकका मुंह बहुत बड़ा था, इसलिए तालाबके जीव अक्सर उनका मजाक उड़ाया करते थे। पर दादा मेंढक उनकी बातोंका बुरा नहीं मानते थे। बड़ा मुंह मक्खियां पकड़नेके लिए बहुत सुविधाजनक था। खास तौरसे बड़े मुंहमें एक साथ दो मक्खियां आ सकती थीं। इसलिए दादा मेंढकको अपने बड़े मुंहपर बहुत गर्व था।

पर एक बार दादा मेंढक अपने बड़े मुंहके कारण संकटमें पड़ गए। एक दिनकी बात है। उन्होंने खूब पेट भरकर मक्खियोंका नाश्ता किया। उस समय उनका पेट ठसाठस भरा हुआ था। उसमें कोई और चीज समानेकी जगह न थी।

उसी समय महाशय ऊदबिलाव नदीसे मछलियोंका शिकार करके लौटे। महाशय ऊदबिलावके हाथमें कई छोटी-बड़ी मछलियां थीं। उसने कहा, "दादा मेंढक, नमस्कार। क्या आपने नाश्ता कर लिया?"

दादा मेंढकने 'नहीं' कहना चाहा, पर दादा मेंढक सदा सच बोलते थे, इसलिए उनके मुंहसे झूठ न निकल पाया। उन्होंने कहा, "हां, महाशय ऊदबिलाव, मैंने अभी अभी नाश्ता कर लिया है। पर तुमने यह क्यों पूछा?"

"ओह! कोई खास बात नहीं। मैंने सोचा कि अगर दादा मेंढकने नाश्ता न किया हो, तो उन्हें एकाध मछली दे दूं। अब तो आपको इसकी जरूरत नहीं होगी।" महाशय ऊदबिलावने आंखें चमकाते हुए कहा और मछलियां दादाके सामने फेंक दीं। वे मछलियां बहुत ही सुंदर थीं। दादा मेंढकके मुंहमें पानी भर आया। उन्होंने कहा, "भाई ऊदबिलाव, बड़ी कृपा है तुम्हारी जो तुमने अपने दादाको याद रखा। मछलियां तो बहुत अच्छी हैं। मेरे पेटमें अभी कुछ जगह है। अगर तुम एक छोटी-सी मछली दे सको, तो बड़ी मेहरबानी होगी।"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं! पर आप मेरे पुराने और गहरे दोस्त हैं न, इसलिए मैं आपको छोटी-सी मछली नहीं दूंगा।"

यह कहकर महाशय ऊदबिलावने एक बड़ी-सी मछली दादा मेंढकके सामने फेंक दी। मछली दादा मेंढककी नाकपर आकर गिरी। मछली दादासे भी बड़ी थी। वह बड़ी सुंदर थी। दादा मेंढकके मुंहसे राल टपकने लगी। वह अपने भरे हुए पेटको भूल गए और महाशय ऊदबिलावको धन्यवाद तक देना उन्हें याद न रहा। उनका मन ललचा उठा। उन्होंने झटसे मछलीको उठाया और फिर उसे अपने मुंहमें डाल लिया।

दादा मेंढक थे बहुत अच्छे। उनके दांत नहीं थे। इसलिए वह किसी बड़ी चीजको काटकर

टुकड़े न कर पाते थे। उन्हें तो सारी चीज एक ही बारमें निगलनी पड़ती थी। उन्होंने मछलीको भी एक ही बारमें निगलना चाहा। पर वह निगल न सके। मछली उनके गलेमें अटक गई। वह उसे निगलनेका प्रयत्न करने लगे। महाशय ऊदबिलाव तालाबके एक पत्थरपर बैठ गए। वह दादा मेंढककी इस कशमकशको देख रहे थे और उनकी हालत देख देखकर हंसीसे लोट-पोट हुए जा रहे थे।

मछली दादा मेंढकके गलेमें बुरी तरह फंस चुकी थी और भरसक प्रयत्न करनेपर भी उनके गलेसे नीचे न उतर रही थी। दादा मेंढक जोरपर जोर लगा रहे थे। इस जोर-आजमाईमें वह कभी इधर लुढ़क जाते थे और कभी उधर। दो बार लुढ़ककर तालाबमें जा गिरे। फिर घिसटते हुए बाहर निकले। फिर वही मछली निगलनेकी कोशिश। मछली अब न मुंहसे बाहर निकल पाती थी और न गलेसे नीचे उतरती थी। उसकी दुम दादा मेंढकके मुंहसे बाहर थी।

बची

kissekahani.com

महाशय ऊदबिलाव दादा मेंढककी इस दुर्दशासे आनंदित हो रहे थे। वह दादा मेंढककी मुसीबतको न समझ सके। वह तो बस हंसते ही जा रहे थे। तालाबके दूसरे किनारेपर एक कछुआ धूप सेंक रहा था। उसने यह शोर सुना, तो भागा हुआ इधर आया।

कछुआ धरतीपर धीरे धीरे चलता है, पर पानीमें तेजीसे तैर सकता है। कछुए मियां जल्दीसे तैरकर ऊदबिलावके पास पहुंचे। वह भी इस तमाशेको देखना चाहते थे। उन्होंने दादा मेंढकको नहीं देखा था। इसलिए उन्होंने ऊदबिलावसे पूछा, "भाई ऊदबिलाव, क्या बात है? हंसीसे क्यों गोल-गप्पा हो रहे हो?"

महाशय ऊदबिलावने दादा मेंढककी ओर इशारा कर दिया। हंसीके मारे उनका यह हाल था कि उनके मुंहसे बात नहीं निकल रही थी।

मियां कछुए झट दादा मेंढकके

(शेष पृष्ठ ५१ पर)

ईंटों की किताब

—गंगोत्रीसिंह

आज अगर किसी आदमीसे कहा जाए कि तुम्हारे दिमागमें ईंट-पत्थर भरे हैं, तो उसे कैसा लगेगा? बेशक वह झगड़ा करनेको तैयार हो जाएगा। कारण साफ है। ऐसा कहकर हम बताना चाहते हैं कि वह बेवकूफ है।

पर एक जमाना ऐसा भी था जब यदि किसीको कहा जाता कि उसके दिमागमें ईंटें भरी हुई हैं, तो वह खुश होता था। तुम सोचोगे क्या कोई ऐसा जमाना भी था जब लोगोंको बेवकूफ कहलवाना अच्छा लगता था? नहीं, मनुष्यका जो इतिहास आज तक हमें मालूम है उसमें कभी कोई ऐसा जमाना नहीं आया जब उसे बेवकूफ बननेका शौक हुआ हो। मनुष्य हर जमानेमें ज्ञानसे प्यार करता आया है। तुम इसे दूसरी तरह कहना चाहो, तो कह सकते हो कि ज्ञानसे प्यार करने वाले जानवरका ही नाम मनुष्य है। इसी लिए जब किसीसे कहा जाए कि तुम्हारे दिमागमें किताबें भरी हैं, तो उसका खुश होना स्वाभाविक है। इसी लिए उस जमानेमें यदि किसीसे कहा जाता कि तुम्हारे दिमागमें ईंटें भरी हुई हैं, तो वह जरूर खुश होता था।

तो इसका अर्थ हुआ कभी किताबें ईंटोंपर छपती थीं?

हां, सच पूछा जाए तो इसका यही अर्थ हुआ। पर इसमें थोड़ी-सी चूक है, क्योंकि उस जमानेमें किताबें नहीं छपती थीं, वे तो हाथसे लिखी जाती थीं।

यह उस जमानेकी बात है जब दुनियामें किसी आदमीने कागजका नाम नहीं सुना था। यह उस जमानेसे भी पहलेकी बात है जब किताबें पत्थरपर, पत्तोंपर, छालपर और चमड़ेपर लिखी जाती थीं। यों समझो कि आजसे चार हजार पहलेकी बात है, बल्कि उससे भी कुछ पहलेकी। यह बात है सुमेरकी।

ईंटोंकी किताबकी बात सुनकर तुम्हें बड़ा अटपटा लग रहा होगा कि क्यों लिखते थे लोग ईंटोंपर किताबें? कैसे लिखते थे? लोग उन्हें कैसे पढ़ते होंगे? वे किताबें कैसी लगती होंगी?

लोग ईंटोंपर किताबें क्यों लिखते थे इसका जवाब सीधा-सा यह है कि आज जिन कारणोंसे लोग कागजपर किताबें लिखते हैं, उन्हीं कारणोंसे उस जमानेमें ईंटोंपर लिखते थे, ताकि वे अपनी बात दूसरों तक पहुंचा सकें। अपने ज्ञान और अनुभवको अपनी अगली पीढ़ियोंके लिए सुरक्षित रख सकें। और ईंटपर तो वे सिर्फ इसलिए लिखते थे कि वे तुम्हारी तरह भाग्यशाली नहीं थे। उन्हें कागज नामकी इस जादूभरी चीजका नाम भी नहीं मालूम था, जिसने तुम्हारे कामको इतना आसान बना दिया है।

कैसे लिखते थे? यह सवाल जरूर कुछ टेढ़ा है। बेशक वे पकी हुई ईंटोंपर नहीं लिखते थे, क्योंकि ऐसा करनेसे उन्हें बहुत अधिक मेहनत करनी पड़ती। वे कच्ची ईंटोंपर लिखते थे और फिर बादमें उन्हें सुखाकर पका लिया करते थे और फिर पुस्तकालयोंमें जमा कर देते थे। कुछ ऐसी किताबें भी होती थीं, जो पुस्तकालयोंमें नहीं पहुंच पाती थीं। कुछ ऐसी किताबें भी हुआ करती थीं, जिन्हें पकानेकी भी नौबत नहीं आती थी।

कभी तुमने कच्ची गीली मिट्टीमें किसी लकड़ीकी नोकसे कुछ लिखनेकी कोशिश की है? गोल अक्षर बनाते समय बहुत मुश्किल होती है न? हां, कच्ची मिट्टीपर भी गोल अक्षर बनाना कठिन तो पड़ता ही है। सो वे लोग नकीली कलमोंसे नकीले अक्षर लिखते थे, पर लिखते बहुत सुंदर थे।

पुस्तकालयकी बात शायद तुम्हें अजीब लगे।

ऐसी पुस्तकोंका पुस्तकालय भी कैसा होता होगा? पूरे पुस्तकालयको भरनेके लिए तो एक ही पुस्तक काफी होती होगी। अधिक हुआ तो दो पुस्तकें।

लेकिन बात ऐसी नहीं है। वे जिन ईंटोंपर लिखते थे वे आखिर मकानकी चिनाईके लिए तो बनी नहीं थीं, सो वे उतनी मोटी भी नहीं हुआ करती थीं जितनी मोटी आजकी ईंट होती है। यही कारण है कि उन्हें अक्सर लोग ईंटें न कहकर मिट्टीकी तख्तियां कहना पसंद करते थे। और हां, वे लोग इतनी खूबसूरतीसे और इतने बारीक अक्षरोंमें लिखते थे कि एक छोटी-सी ईंटपर ही बहुत कुछ लिख डालते थे। कभी कभी तो एक पूरीकी पूरी किताब एक ही ईंटपर खत्म हो जाती थी। यह मानना होगा कि उस जमानेमें किताबें इतनी बड़ी नहीं हुआ करती थीं, फिर भी अपने आपमें वे बहुत छोटी भी नहीं होती थीं। ईंटपर लिखनेकी कलामें वे इतने आगे बढ़े हुए थे कि एक छोटी-सी ईंटपर एक छोटी-मोटी किताब उतार सकते थे।

उनकी इस कलाका एक नमूना एक पुस्तकालयकी वह ग्रंथ सूची है, जो इतनी छोटी ईंट है कि इसे तुम चाहो, तो अपने कानमें खोंस लो और फिर भूल ही जाओ। इसका आकार है डेढ़ इंच लंबा और डेढ़ इंच चौड़ा। किताबोंकी सूची जरूर इसपर दोनों ओर दी गई है। इस छोटी-सी जगहमें उस जमानेके लेखकने बासठ किताबोंके नाम अंकित किए हैं।

यह जानकर कितनी खुशी होती है कि आदमी जिस जमानेमें ईंटकी किताबें पढ़ता और ईंटपर लिखता था उस जमानेमें भी वह एक पूरीकी पूरी किताब उतनी ही आसानीसे अपनी बगलमें दबाए चल सकता था, जितनी आसानीसे हम आज अपनी किताबें लेकर चलते हैं।●

एफ-९/३५ कृष्ण नगर, दिल्ली-३१

जिराफ : कुछ रोचक बातें

जिराफकी लंबी ऊंटकी तरह उठी हुई गर्दन देखने वालोंके लिए विशेष आश्चर्यका विषय है। लेकिन जिराफके बारेमें और भी कई रोचक और आश्चर्यजनक बातें हैं :

पुराने जमानेसे यह बात प्रचलित है कि जिराफके गलेमें स्वर-तंतु नहीं होते। फिर भी कुछ लोगोंका दावा है कि उन्होंने जिराफकी आवाज सुनी है। अमरीकाके ब्रांक्स चिड़ियाघरके रक्षकोंने २५ अक्तूबर १९४३ को सुबह नौ बजकर पचास मिनिटपर जिराफको साफ साफ 'मूड' की आवाज निकालते सुना था। केन्याके एक शिकारीने भी सन १९३६ में दावा किया था कि जिराफका बच्चा मांसे बिछुड़नेपर गायसे बिछुड़े हुए बछड़ेकी तरह रंभाता है।

सच्चाई यह है कि जिराफ अक्सर खामोश रहता है और इसी लिए यह कहानी बन गई है कि उसके गलेमें स्वर-यंत्र नहीं होता। उसके गलेमें स्वर-तंतु या आवाज पैदा करने वाली झिल्लियां होती हैं; स्वर-यंत्र (लेरीक्स) या झिल्लियोंसे पैदा हुई आवाजको गूंजके द्वारा बढ़ाने वाली गुफा जरा कम विकसित होती है।

जिराफके बारेमें एक और रोचक बात है कि उसका हृदय बहुत बड़ा होता है। हृदय असलमें प्रकृतिका बनाया हुआ एक पंप ही तो है, जो प्राणधारियोंके शरीरमें रक्तके प्रवाहको बराबर जारी रखता है। जिराफका हृदय प्रकृतिके बनाए हुए इन पंपोंमेंसे सबसे ज्यादा शक्तिशाली होता है। कारण? जिराफका सिर उसके हृदयस्थलसे लगभग १२ फुटकी ऊंचाईपर होता है। अब यह शक्तिशाली हृदयपंप ही तो इतनी ऊंचाईपर टिके हुए मस्तिष्क तक रक्त पहुंचाता है।

उसके हृदयकी एक और विशेषता है। जब कभी जिराफ अपनी गर्दन नीचे झुकाता है, तो डर होता है कि मस्तिष्ककी ओर आवश्यकतासे अधिक रक्त न जाने लगे—क्योंकि मस्तिष्कमें अधिक रक्त पहुंचनेसे मस्तिष्ककी नस फट जाने और जिराफके मर जानेका डर होता है। प्रकृतिने इस खतरेको टालनेके लिए इसके हृदयरूपी पंपमें एक 'वाल्व' ज्यादा लगाया है।

इस वाल्वका लाभ यह है कि जब जिराफ अपनी गर्दन ऊंची किए हुए होता है, तो यह मस्तिष्कसे रक्तकी निकासीपर नियंत्रण रखता है, जिससे रक्त अपना काम पूरा किए बगैर न लौटे। जब जिराफ अपनी गर्दन नीची करता है, तो यह अतिरिक्त रक्तको मस्तिष्ककी ओर जानेसे रोकता है।

—कौशल्या
३३-ई, दयानंद नगर,
गाजियाबाद (उ.प्र.)

तीज का त्योहार: झूलों की बहार

अपनी राधा को झूला झुलाएं गोरी!
(छाया : घनश्याम अग्रवाल)

त्योहारोंका और कोई महत्व हो या न हो, लेकिन इतना निश्चित है कि त्योहारोंके बहाने लोगोंको एक स्थानपर एकत्र होने, मेलोंका आनंद लेने, साफ-सफाई करनेका अवसर मिल जाता है। चूंकि हर त्योहारके साथ कोई न कोई पौराणिक या ऐतिहासिक घटना भी जुड़ी रहती है, इसलिए इनसे लोगोंको अपने देशकी धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराका भी सहज ज्ञान हो जाता है।

श्रावण मासके समाप्त होने और भाद्रपद आरंभ होनेपर भारतके कई राज्योंमें तीजके त्योहारपर खूब धूमधाम रहती है। यह त्योहार खास तौरसे महिलाओं और बालिकाओंका त्योहार है। राजस्थान, उत्तर प्रदेश और मध्यभारतमें इस मौकेपर बाग-बगीचों अथवा घरके आंगनोंमें झूले डाले जाते हैं, जिनपर लंबे-लंबे पेंग लेकर बालिकाएं मधुर कंठोंसे सामूहिक रूपमें गीत गाती हैं। तीजके अवसरपर देवीकी पूजा भी होती है। पूजाके लिए जाते समय जब महिलाएं और बालिकाएं रंग-बिरंगे वस्त्रोंसे सुसज्जित होकर जुलूसके रूपमें बाहर निकलती हैं, तब शहर हो या गांव, यह दृश्य देखनेके लिए लोग उमड़ पड़ते हैं। कहीं कहीं तो ऐसे जुलूसोंमें सजेधजे हाथी, घोड़े और ऊंट भी रहते हैं। बनारसमें इस पर्वपर लोग नावोंपर चढ़कर गंगामें नौका-विहार करते हुए वर्षाका विशेष लोक-गीत 'कजरी' बड़ी उमंगसे गाते हैं। ●

ी की तान सुनाएं गोरी!
(छाया : जे. एस. पारीक)

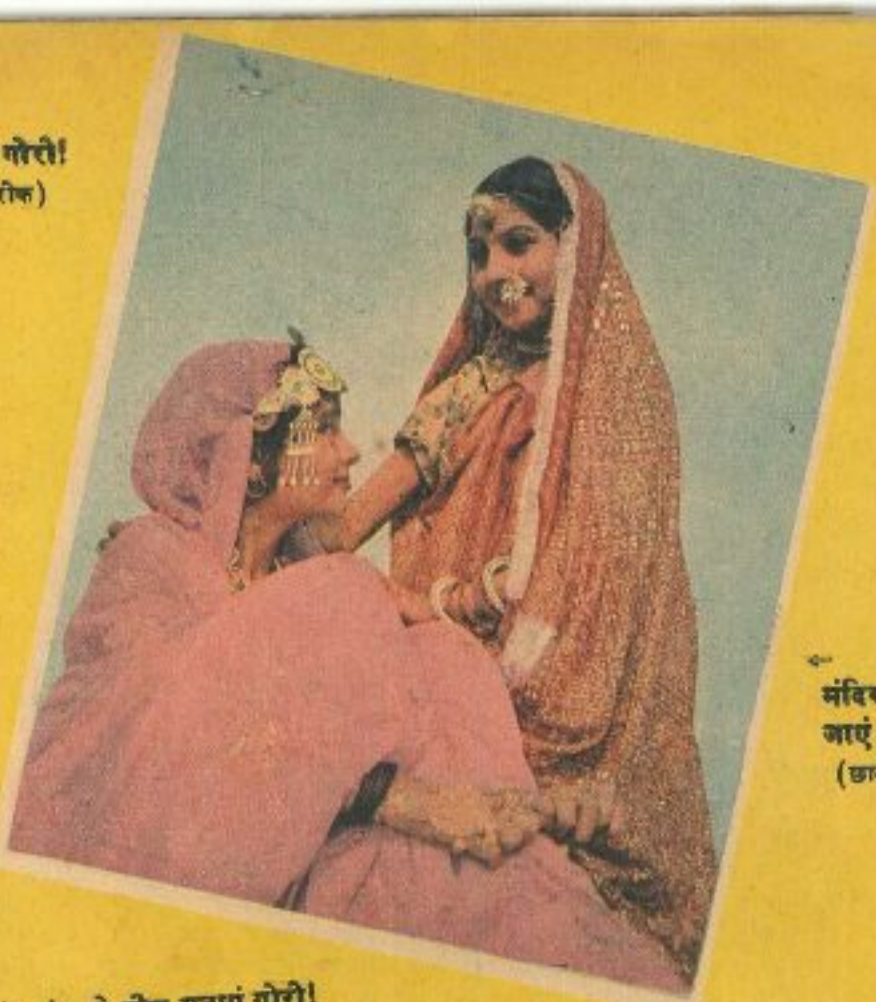

मंदिरमें पूजनको
जाएं गोरी!
(छाया : घनश्याम
अग्रवाल)

हंस हंस के तीज मनाएं गोरी!
(छाया : जे. एस. पारीक)

जुबानों की कुछ विचित्र खूबियां

—सतीशकुमार जैन

जुबानके जरिए हम धीरेसे धीरे बात कर सकते हैं और जोरसे चिल्लाकर अपना गुस्सा भी जाहिर कर सकते हैं। आज हम तुम्हें कुछ अजीब जुबानोंके बारेमें बताते हैं। तुमने लड़कबढ़ैयाको देखा होगा। यह चिड़िया पेड़पर बैठकर आंखें बंदकर सो-सी जाती है, लेकिन सोती नहीं है, बल्कि अपनी जुबानको पेड़के छेदमें अंदर ही अंदर घुमाती है और उसके सारे कीड़े-मकोड़ोंको खा जाती है। इसकी जुबान एक हथियारकी तरह होती है, जिसके द्वारा वह मजबूतसे मजबूत पेड़को काट सकती है। एक बार एक जीवित लड़कबढ़ैयाको पकड़ा गया। जब उसकी जुबान खींची गई, तो उसकी लंबाई डेढ़ फुटके लगभग निकली। जब जुबानको छोड़ दिया गया, तो वह पुनः अपनी जगहपर आ गई।

तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि लोग कुत्ते-बिल्लीकी तरह छिपकलीको भी पालते हैं। यह किसलिए पाली जाती है यह भी तुम्हें बता दें। बरसातके दिनोंमें मक्खी-मच्छर बहुत हो जाते हैं, जिनसे बीमारी फैलती है। उस बीमारीसे बचनेके लिए लोग छिपकली पालते हैं। यह अपनी जुबानसे मक्खियोंको पकड़ पकड़कर मुंहमें रखती जाती है। मक्खी चाहे किधर को भी उड़े, मगर वह छिपकलीकी जुबानसे बच नहीं सकती।

इसके अलावा बहुतसे लोग मेंढकोंको भी पालते हैं। इनकी जुबान भी छिपकलीकी तरह होती है। ये भी अपनी जुबानसे कीड़े-मकोड़ोंको नहीं छोड़ते।

तुमने कभी बिल्लीको दूध पीते हुए देखा होगा कि वह दूधको जुबानसे किस तरह चाटती है। चूहे पकड़नेके लिए भी वह अपनी जुबानको इस्तेमालमें लाती है।

सभी आदमी शेरके पास जानेमें इसलिए डरते हैं कि वह खूंखार जानवर है। उसके नुकीले पंजे होते हैं और तेज दांत। ये तो सब ठीक, लेकिन कुछ सरकस-वालोंने बताया है कि उसकी जुबान सबसे अधिक भयानक होती है। यदि प्यार प्यारमें शेर किसीको चाट दे, तो उस हिस्सेसे खून बहने लगेगा। अगर वह लगातार चाटता रहे, तो हड्डियां ही शेष रह जाएंगी।

मछलीके जुबान तो होती है, पर वह बहुत छोटी होती है। अधिकतर वह अपना आहार अपनी जुबानके द्वारा ही लेती है। बड़ीसे बड़ी चीजको वह अपनी जुबानके द्वारा निगल जाती है। शायद तुम यह नहीं जानते होगे कि मछली मिठाई खानेकी बड़ी शौकीन होती है। यही कारण है कि वह मीठी चीजोंको बहुत पसंद करती है।

प्राणी मात्रमें सबसे अधिक काम सांप अपनी जुबानसे लेता है। जिस चीजको वह खाता है, उसका स्पर्श वह अपनी जुबानसे करता है और वह यह जान लेता है कि वह चीज उसके उपयुक्त है अथवा नहीं। फिर वह उसे चाट चाटकर खा लेता है। जब वह चलता है, तो तुमने देखा होगा कि वह अपनी जुबानको बार बार बाहर निकालता है। इससे उसे अनुमान हो जाता है कि आगेकी भूमि कैसी है। इसी तरह वह अपनी खूराकको जबान फेरकर देख लेता है कि उसका आकार कितना है। उसे वह निगल सकता है या नहीं।

अब तुम जुबानोंके बारेमें समझ गए होगे कि ये कितने कामकी चीज हैं। ●

नवभारत टाइम्स, ७ जफर मार्ग,
नई दिल्ली

असली भूत

- वीणा वल्लभ

ग्राम अरनालासे कुछ दूर कच्ची सड़कपर, एक पक्की तिदरी बनी हुई है, शायद किसी दानी पुरुषने राहगीरोंके विश्रामके लिए इसका निर्माण कराया हो। परंतु कई सालोंसे इसमें एक बाबाजी रह रहे हैं। इनका नाम क्या है, कोई नहीं जानता। नामके स्थानपर लोग इनको भूत बाबा कहते हैं।

बाबाजी बड़े जीवटवाले हैं। प्रेतों और जिन्नोंसे आमने-सामने बातें करते हैं। दो-चार भूत इनकी सेवामें हर समय रहते हैं। जो चाहिए सो लाकर देते हैं।

एक दिन उस गांवके बड़े-बूढ़ोंने बाबाजीसे किसी एक युवकको अपना शिष्य बनानेकी विनती की ताकि बाबाजीके बाद वह भी भूतोंसे गांवकी रक्षा कर सके। लोगोंके आग्रहपर बाबाजी राजी हो गए। गांवके मदारीका बेटा जोगिया बाबाजीका चेला बन गया। फिर तो बाबाजी बहुत कम गांवमें आने लगे। सब काम जोगिया ही करने लग गया।

एक दिन जोगिया जब गांवके बाजारमें आया, तो बात ही बातमें शहरसे आया हुआ पंजी साहूका बेटा गोविंद उससे उलझ पड़ा। बोला—"भूत-ऊत सब डरपोक मनुष्योंकी बनाई हुई बातें हैं। मैं इन अंध-विश्वासोंसे सख्त नफरत करता हूं, मुझे कोई भूत दिखा दे, तो मैं मानूं।"

अंतमें जोगिया गोविंदको लेकर बाबाजीके पास आया। इतवारकी रात भूत दिखानेके लिए तय रही।

साहूने अपने बेटेको बहुत समझाया, पर वह अपनी जिदपर अड़ा ही रहा। साहूने अपने नौकरको बेटेके साथ कर देना चाहा, तो गोविंदको बाबाजीकी हिदायत याद आ गई कि साथ कोई न आए। उसने इसके लिए भी मना कर दिया। वह अकेले ही श्मशानमें भूत देखनेके लिए चल पड़ा।

श्मशानमें बाबाजी एक नई चिताके पास बैठे थे। सामने एक आदमीकी खोपड़ी पड़ी थी। चिताकी राख अभी तक गरम थी।

गोविंद बाबाजीके सामने जाकर प्रणाम करके चुपचाप बैठ गया। बाबाजी बोले, "यह आदमी मरा है, इसकी रूह यहीं भटक रही है। उसे आसानीसे बुलाया जा सकता है। तुम आंख बंद करके बैठो, मैं मंत्र पढ़ता हूं। आवाज लगानेपर आंख खोलना। सब कुछ दिखाई पड़ेगा!" इतना कहकर बाबाजी कुछ गुनगुनाने लगे।

थोड़ी देर बाद आवाजपर जब गोविंदने आंखें खोलीं, तो अपने सामने काले कपड़ोंमें एक काला-सा भूत खड़ा पाया। इतनेमें ही गोविंदके पास एक और भूत आ खड़ा हुआ। उसको देखते ही बुलाया हुआ भूत एकदम भागा। भूतके पीछे पीछे ही बाबाजी भी उठकर भागे।

बहुत दूर दौड़नेपर बाबाजी भूत तक पहुंच सके। बाबाजी बोले, "जोगिये, तू भागकर क्यों आ गया?"

जोगिया बोला, "बाबाजी, आपके मंत्रोंके जोरसे तो वहां एक सचमुच ही भूत आ खड़ा हुआ। मेरी कोई जरूरत ही नहीं रही।"

बाबाजी गुस्सा होकर बोले, "अरे मूर्ख, तूने सारा मामला गड़-गोबर कर दिया। यह तो साहूका नौकर भूरा था, जो शायद छिपकर खड़ा था। घबड़ाहटमें तूने उसे पहचाना नहीं और भाग आया। अब इस बस्तीमें रहनेमें खैर नहीं।"

दूसरे दिनसे बाबाजीका कोई पता नहीं था।●

रूम नं ९, मोहन बालजी चाल,
क्वारी रोड, मालाड, बम्बई—६४

kissekahani.com

रोचक लेख

मनुष्य की तीसरी भौंह

- वीरकुमार 'अधीर'

आजकलके आदमी दाढ़ी-मूंछको उगनेसे पहले ही साफ करा देते हैं और चेहरेको खूब साफ-सुथरा—खरचे हुए नारियलकी तरह जटाविहीन—बनाकर रखना ज्यादा पसंद करते हैं। मगर एक जमाना था, जब मूंछोंका रौब-दाब पूरे भारतमें छाया हुआ था और बगैर मूंछोंके आदमीको आदमी माननेसे साफ इनकार कर दिया जाता था।

अपनी इस प्राचीन संस्कृतिके विभिन्न नमूने आज भी देशके कोने कोनेमें सर्वत्र विद्यमान हैं।

तुममेंसे कइयोंको अपनी 'अलबम'में फूलोंकी पत्तियां एकत्र करनेका शौक होगा। कई डाक-टिकटोंका संग्रह करते होंगे और कई तितलियों-को पुस्तकोंमें सजाकर रखते होंगे। मगर मैं कहता हूं, यदि तुम आदमियोंकी मूंछोंके नमूने जमा करो, तो तुम्हारे पास एक अच्छा-खासा संग्रह हो जाएगा और तरह तरहकी सांस्कृतिक-असांस्कृतिक, तितली-कट, मछली-कट, तलवार-कट, कैंची-कट आदि किस्म किस्मकी मूंछें प्राप्त होंगी। संभव है तलवार और कैंची-कटके साथ साथ वैज्ञानिक प्रगतिके इस युगमें कहीं कहीं तुम्हें तोप-कट और रॉकेट-कटकी मूंछें भी प्राप्त हो जाएं। भागते चूहेकी-सी मूंछें, सांसके साथ हांफती मूंछें, हवामें या क्रोधमें कांपती मूंछें—ध्यान दो क्या क्या 'सीन' पेश होते हैं!

भागते चूहेकी-सी मूंछें बड़ी बेडौल और बदसूरत लगती होंगी, लेकिन अपनी 'अलबम' में इन्हें भी जरूर शामिल कर रखो, क्योंकि ये भी मूंछोंकी किस्मोंमेंसे एक हैं।

मूंछोंके चलते-फिरते अजायबघर तुमने देखे ही होंगे। मैंने एक आदमीकी मूंछें देखी हैं, जिनके दोनों सिरोंको पकड़कर यदि कोइ बच्चा लटक जाए और रोजाना प्रातःकाल धीरे धीरे अपने आपको ऊपर उठानेका अभ्यास करे, तो निश्चित ही इस नियमित अभ्याससे कुछ ही दिनोंमें उसका सीना चौड़ा हो जाएगा और मांस-पेशियां मजबूत बन जाएंगी सो अलग।

एक बार एक बहुत ही लंबे व्यक्तिकी छज्जेदार मूछें देखकर मुझे काफी परेशान होना पड़ा। मैंने सोचा, काश इन मूंछोंकी एक 'साइड' पर खड़े होकर गुजरते हुए जलूसका नजारा करनेका सौभाग्य मिला होता। उस व्यक्तिकी मूंछें न केवल छज्जेदार ही थीं, बल्कि इतनी चौड़ी भी थीं कि उनपर इत्मीनानसे खड़े होकर उस आदमीकी लंबाईका फायदा उठाया जा सकता था। मेरी तो बात ही छोड़िए, मैं तो यहां तक कहता हूं कि जब वह आदमी आईनेके सामने खड़ा होता होगा, तब स्वयं उसका दिल उन मूंछोंपर खड़े होकर ठंडी हवाका मजा लेनेके लिए ललकने लगता होगा! यदि उसका बस चलता, तो निश्चय ही वह अबतक अपनी मूंछोंपर खड़ा हो गया होता। लेकिन फिलहाल उसकी यह मनोकामना उसकी मूंछोंके ऊपर विराजमान उसकी दो आंखें पूरी कर रही थीं।

हमारा छोटा बब्बू एक दिन इन मूंछोंके कारण बड़ा परेशान हुआ। उस दिन घरमें जीजा-जी आए हुए थे। बब्बूजी काफी गौरसे उनके चेहरेका मुआयना करते हुए उनके पास पहुंचे, फिर भोलेपनसे पूछ बैठे, "ये क्या हैं?" उनका इशारा मूंछोंकी ओर था।

"ये मेरी मूंछें हैं, बेटे," जीजाजीने बताया।

"झूठ! आप मुझे बहका रहे हैं। सच सच बता दो, मैं लूंगा नहीं," बब्बूने आश्वासन दिया।

"ये मूंछें हैं, बेटे, सच मानो!"

"झूठ!" बब्बू फिर बिफर गया, "ये तितली हैं," फिर स्वरको संयत करते हुए भोली आवाजमें बोला, "कहांसे लाए? कौनसे बगीचेसे?"

और कमरा ठहाकोंसे गूंज उठा। अब भला उम्रमें छोटे बब्बूको कौन समझाए कि ये तितली-कट मूंछें हैं और कम्बख्त नाईने इस चतुराईसे उन्हें संवारा है कि जानबूझकर चिपकाई

बम्बईके उपनगर कल्याणके निवासी पंडित मसूड़ियाबीन जिनकी मूंछोंकी लंबाई सौ इंच है

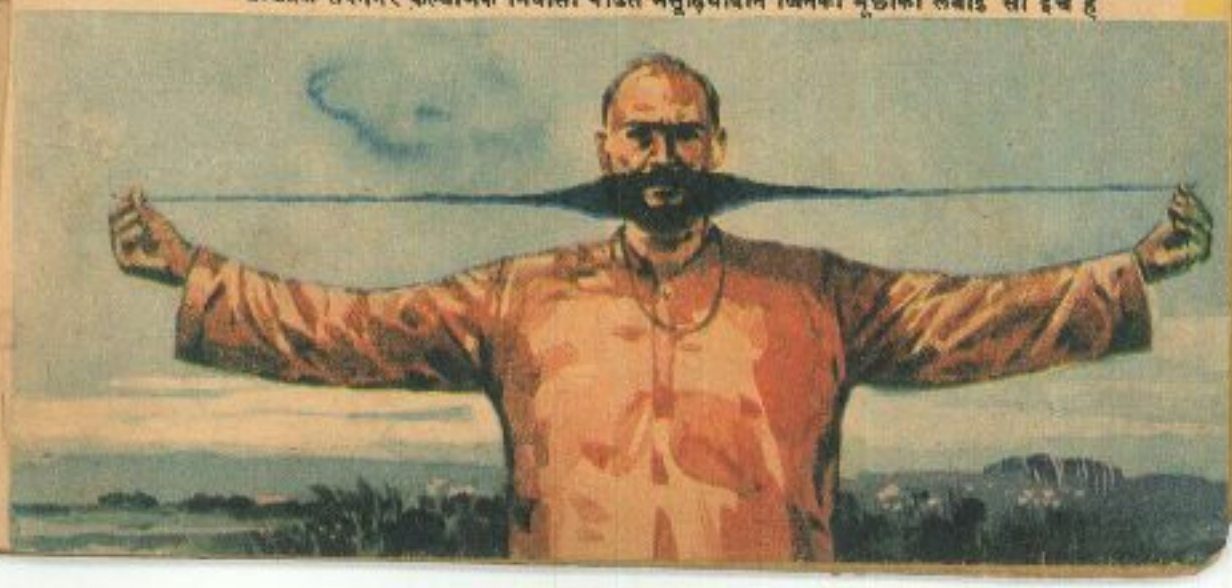

गई तितली ही मालूम होती हैं।

आप आश्चर्य न करें, देशमें एक फुटसे लेकर गजों तक मूछें रखने वाले लोग विद्यमान हैं। राजस्थानमें मैंने एक मनुष्यकी डेढ़ गज लंबी मूंछें देखीं, तो खयाल आया कि वह मनुष्य उनका सदुपयोग अपने घरकी कुर्सीमें जुटकी जगह न जाने क्यों नहीं करता। निश्चित रूपसे इतनी बड़ी वे मूंछें थीं कि उनसे किसी बच्चेके लिए कम्बल तो आसानीसे बुना जा सकता था।

आंखोंके दोनों सूराखोंके ऊपर धनुषाकार फैली दो भौंहें मूंछोंकी बहनें मालूम होती हैं। कह नहीं सकता, आने वाले जमानेमें सफाई-पसंद मनुष्य इनकी सफाई करे या न करे, परंतु आप तसवीर बनाते समय जब किसी चेहरेकी आकृति बनाते हैं, तो आंखोंके सूराखोंपर भौंहोंका 'शेड' अवश्य देते हैं। परंतु मुंहके सूराखको कोरा छोड़ देते हैं, तो वह कितना बेडौल, बदसूरत और दुमकटा महसूस होता है। दुमकटी बिल्ली किस कदर बेडौल और बेगैरत मालूम होती है।

मैं देखता हूं, आजकल कुछ औरतोंने भौंहें काटकर उनके स्थानपर पेंसिलसे तरह तरहकी रंगीन भौंहें बनानी आरंभ कर दी हैं। मेकअपके सामानमें इस वस्तुका भी एक विशिष्ट स्थान बन गया है। मेरा विचार है, जब पुरुषोंने मूंछोंका सफाया कर दिया है, तो उन्हें भी पेंसिलका आसरा लेकर अपने चेहरेपर इंद्रधनुष बनाने आरंभ कर देने चाहिएं। इससे यह भी तय किया जा सकेगा कि कौन-सा रंग आपके चेहरेके रंगसे मेल खाता है। परेशानीकी कोई बात नहीं। इसकी एक और भी तरकीब है— बाजारसे बनी बनाई मनपसंद मूंछें चुन लाओ और मनचाहे रंगमें रंगकर फर-फराते चले जाओ! बच्चोंके लिए यह विधि सबसे अधिक कारगर साबित होगी।

यह कहानी तो सबने सुनी ही होगी कि बनिए की मूंछें ऊपर उठीं देखकर जाटने तुरंत उसे 'चैलेंज' मान लिया था और जबतक उसने मूंछें नीची नहीं कर ली, उसे लड़नेको मजबूर करता रहा।

आश्चर्य न करो, प्राचीन भारतमें मूंछके बालकी गिरवी रखकर हजारों रुपयेका उधार तक लिया जा सकता था। उस जमानेमें मूंछके बालकी महत्ता सोनेसे भी अधिक थी।

इधर, मूंछोंके संबंधमें कुछ और नई बातें प्रकाशमें आई हैं। चोरकी दाढ़ीमें तिनका देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चोर रातभर भूसेके ढेरमें छिपा रहा है। लेकिन चोरकी मूंछोंमें चिपचिपाहट देखकर तुम तुरंत इस नतीजेपर पहुंच सकते हो कि चोरीसे दूध पिया गया है और यदि मूंछें नुची-खुसी हालतमें हों, तो बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि चूहेने उन्हें चाटा है! ऐसी अवस्थामें चोरको तुरंत पकड़ लो और अपनी मूंछें ऐंठते हुए उससे दो-दो हाथ करो।

मूंछोंपर ताव देनेसे प्रायः प्रतिद्वंद्वीको ताव आ जाता है। इसलिए मूंछोंपर ताव केवल जरूरत पड़नेपर ही देना चाहिए, क्योंकि सेरसे सवा सेर और सवा सेरसे ढाई सेर हर जगह टकराते ही रहते हैं। शेरको गौरसे देखो, वह कभी अपनी मूंछोंपर ताव नहीं देता।

मूंछ और पूंछ दोनों ही बहुत नायाब और बेमि-साल चीजें हैं। जानवरोंमें जिसके पास पूंछ नहीं होती उसे बिरादरीसे बाहर कर दिया जाता है। मनुष्योंमें पहले जिसके मुंहपर मूंछें नहीं उगती थीं उसे बच्चों या स्त्रियोंके वर्गमें गिन लिया जाता था। यदि बच्चोंको बड़ोंके वर्गमें बैठना है और औरतोंको पुरुषोंसे समानाधिकारोंके लिए टक्कर लेनी है, तो खास घोड़ेकी पूंछसे बनी मूंछोंका सदुपयोग करें।

अंतमें केवल इतना ही निवेदन करूंगा कि मेरा यह लेख अपने नगरके मूंछ-विक्रेताको अवश्य पढ़वाओ ताकि वह लोगोंको समझा सके कि मूंछों-की आधुनिकतामें उनके प्राचीन गौरवका क्या सांस्कृतिक महत्व है! इससे उसकी बिक्री बढ़ेगी। शर्त सिर्फ यही है कि बिक्री बढ़नेकी स्थितिमें वह मुझे अपनी मूंछोंकी बिक्रीपर केवल दस प्रतिशत रायल्टी प्रदान करे।

और क्या लिखूं गौरवशालिनी मूंछोंके बारे-में। दोनों भौंहोंके मध्य, मुख सिंहासनपर विराज-मान इस तीसरी भौंहको ध्यानसे देखो, तब तुम्हें मालूम होगा कि इतिहासके और क्या क्या रहस्य खुलते चले जाते हैं! ●

३ हनूमान चौक,
देहरादून (उ. प्र.)

एक अरब की पहेली

—आशकरण कोचर

बहुत समय पहलेकी बात है, अरबके दो यात्री बगदाद शहरको जाते समय, दोपहरको भोजन करनेके लिए, एक छोटेसे गांवमें ठहरे। उनमेंसे एकके पास पांच और दूसरेके पास तीन रोटियां थीं।

वे भोजन करने बैठे ही थे कि इतनेमें एक अजनबी आदमी वहां आया और उनसे बोला—"मेरे पास रुपये तो हैं, परंतु भोजन नहीं है। अतः अगर आप मुझको कुछ भोजन देनेकी कृपा करें, तो मैं वादा करता हूं कि मेरे पास जितना धन है, वह आप दोनोंको दे दूंगा।" इस बातपर यात्री रोटियोंको तीन बराबर भागोंमें बांटनेको तैयार हो गए।

भोजन समाप्त करनेके बाद अजनबीने भोजनके लिए आठ मुहरें दीं और आदरपूर्वक प्रणाम करके चला गया। जिसके पास पांच रोटियां थीं, उसने अपने हिस्सेके अनुसार पांच मोहरें उठाकर जेबमें रख लीं और तीन अपने साथीके हिस्सेकी छोड़ दीं। इसपर उसका साथी सहमत न हुआ और आधा हिस्सा लनेके लिए झगड़ने लगा। दोनोंमें झगड़ा बहुत बढ़ गया और अंतमें जब किसी प्रकार समझौता न हुआ, तो दोनोंने काजीके पास चलकर फैसला करानेका निश्चय किया।

काजीने दोनोंकी बातोंको बड़े ध्यानसे सुनकर ऐसी बात कही, जिसको सुनकर वे दोनों आश्चर्यचकित रह गए। काजीने कहा कि पांच रोटियोंवालेको सात और तीन रोटियोंवालेको एक मुहर मिलनी चाहिए।

पहले तो तीन रोटियोंवालेने सोचा शायद काजीसे गलती हो गई है। परंतु जब काजीने दुबारा वही फैसला सुनाया, तो वह बोला—"यह न्यायके खिलाफ है। जब मेरे पास अपने साथीसे दो रोटियां ही कम थीं, तब मुझे एक ही मोहर मिल, और मेरे साथीको सात?"

इसपर काजीने कहा, "अच्छा, सुनो। तुममेंसे एकके पास पांच रोटियां थीं और दूसरेके पास तीन। सब मिलाकर आठ हुईं। और जब तीसरा यात्री आकर शामिल हुआ, तब आठों रोटी तीनोंको बराबर बराबर बांट दी गईं। अब मान लो, प्रत्येक रोटीके तीन बराबर हिस्से किए जाएं, तो २४ हिस्से होते हैं। जिस प्रकार तुमने आपसमें बराबर बराबर हिस्से बांटे थे, उसके अनुसार हर एकको उतनी रोटी मिली, जितनी आठ हिस्सोंके बराबर होती है। परंतु पहले यात्रीके पास असलमें पांच रोटियां या १५ टुकड़े थे। जब उसने अपने हिस्सेके आठ

टुकड़े ले लिए, तो उस अजनबीको सात रोटियोंके टुकड़े जरूर दिए। दूसरेके पास तीन रोटियां थीं, या यह कहो कि नौ हिस्से। जब उसने अपने हिस्सेके आठ टुकड़े ले लिए, तो उसने अजनबी यात्रीको सिर्फ एक हिस्सा दिया। तुम सोच सकते हो कि मेरा फैसला ठीक है या नहीं। सात मोहरें उसको मिलनी चाहिएं, जिसने सात टुकड़े दिए हैं, और एक उसको जिसने एक हिस्सा दिया।"

दोनों यात्रियोंको उस फैसलेपर राजी होना पड़ा, क्योंकि पहले उन्होंने इस प्रकार नहीं सोचा था। जिस आदमीके पास तीन टुकड़े थे, उसने मन ही मन कहा—'मैं बड़ा ही मूर्ख हूं, जो पहले ही अपने मित्र द्वारा तीन मोहरें देने पर न लीं।' ●

द्वारा श्री सोहनलाल कोचर, पो. सुजानगढ़ (राज.)

kissekahani.com

कहानी

पैबंद

—अशोक आत्रेय

बबलूने स्कूलकी तैयारी की। बस्तेमें दोपहरी-के लिए टिफिन धर लिया। 'होमवर्क'की सभी कापियां संभाल लीं और जादूके खेलके लिए दस पैसेका सिक्का सावधानीसे याद करके कमीजकी ऊपरवाली जेबमें रख लिया। जादूके लिए तो पड़ोसकी छोटी लड़की मुन्नीने भी अपनी इच्छा जाहिर की थी, किंतु अकड़कर उसने मुन्नीसे साफ कह दिया था—"नहीं, तू नहीं चल सकती, यह खेल केवल हमारे स्कूलके लिए है।"

और वह अकड़कर स्कूलके लिए अपने कंधे-पर बस्ता टांगकर रवाना हो गया था। स्कूलके लिए वह समयसे जल्दी ही निकल आया था, इसलिए वह 'शार्टकट' (छोटे रास्ते) से नहीं गया, बल्कि सड़क सड़क ही चलने लगा।

अचानक उसका ध्यान अपने पीछे चलती अपनी कक्षाकी लड़की बंटीपर पड़ा। कुछ ध्यान आनेपर उसके चेहरेपर हवाइयां उड़नेके-से भाव उभर आए। उसे अपने पैंटमें लगे पैबंदपर बंटीकी आंखें ठीक और पूरी जमती-सी लगीं। उसकी चाल डगमगाने लगी। वह अपने आपको भारी भारी-सा महसूस करने लगा।

उसने सोचा—'बंटी आगे निकल जाती, तो ठीक रहता। तब कमसे कम अभी वाली कमजोर स्थितिका सामना तो उसे नहीं करना पड़ता!' उसे लगा जैसे पैंटके पैबंद लगे हिस्सेमें कहींसे उसका अंडरवियर भी बाहर निकल रहा है। सारा ध्यान उसका अपना पैबंदके उसी हिस्सेपर केंद्रित हो गया।

अबकी बार बबलूने एक हल्की-सी नजरसे पीछेकी ओर देखा। उसे लगा जैसे वह बंटीके सामने बहुत छोटा हो गया है। बंटी घुटनों तकका उजला-धुला फ्रॉक पहने उसे बड़ी अच्छी लगी।

अपनी अम्मांपर बबलूको गुस्सा आने लगा। मम्मीने क्यों पहनने दी उसे यह पैंट! मम्मी कहने लगी थीं कि ऐसी कीमती पैंटको फेंका थोड़े ही जाएगा! बबलू अजीब तरहसे दयाका पात्र बन गया।

उसने यह भी सोचा कि अगर वह बंटीसे थोड़ा भी आगे होता, तो कुछ देर ठहरकर उससे पीछे हो सकता था। किंतु अब तो वह ऐसा भी नहीं कर सकता। अगर वह कुछ धीरे चले, तो बंटीकी आंखके और पास उसका यह पैबंद-

का भाग आ जाएगा। नीचे झुककर फीते बांधनेकी भी कोशिश की उसने, किंतु इसमें भी उसे अपनी कमजोरीका आभास हुआ।

जेबसे रूमाल निकालकर बबलने अपना चेहरा पोंछ लिया। उसने सोचा कि उसकी दांई टांग बाईं टांगकी अपेक्षा अधिक तेज चल रही थी शायद। उसे अपनी चाल आज बहुत बुरी लगने लगी।

किसी तरह स्कूलकी इमारत आ गई। वह रुआंसा होकर कक्षामें बैठ गया। उसने आज कक्षामें और सभी लड़कोंसे अपने आपको अलग पाया। खाली पीरियड होनेपर भी वह पुस्तकालयमें नई पत्रिकाएं पढ़ने नहीं गया और गुपचुप अपना 'होमवर्क' देखने लगा। उसे यह भी महसूस हुआ कि शायद उसकी पैबंद लगी पैंटको कक्षाके कई लड़के-लड़कियोंने देख लिया हो। क्या पता बंटीने कह दिया हो सबसे!

बबलने सोचा—'उसने आजकी छुट्टी क्यों नहीं ले ली?' वह घुटन महसूस करने लगा। उसने तय किया कि वह जादूका खेल नहीं देखेगा। आधी छुट्टीमें ही घर चला जाएगा।

यों ही बैठे बैठे और सोचते सोचते दो पीरियड और खतम हो गए। खेलकी घंटी बज गई। उसने घर जानेकी तैयारीमें अपना बस्ता कंधेपर टांग लिया।

सब लड़के-लड़कियां चौगानमें जादूके खेलके लिए इकट्ठा होने लगे। कक्षाकी और लड़कियोंके साथ बंटी भी जब बाहर आ गई, तब वह उठा।

पर कक्षाके बाहर आते ही, लड़कियोंके झुंडके पीछे पीछे चलते चलते, उसे बंटीके फ्रॉकके पिछले हिस्सेमें भी एक छोटा पैबंद दिखलाई पड़ा। बंटीकी फ्रॉकमें भी पैबंद! उसे यह जानकर बड़ा संतोष हुआ। अपनी हीनभावनासे उसे तुरंत छुटकारा मिल गया, और वह भी खुशी खुशी चौगानमें जादूका खेल देखने वाले लड़कोंकी कतारमें खड़ा हो गया! ●

भाषा भवन, रामपुरिया चौक,
बीकानेर (राजस्थान)

बीत गई गरमी की छुट्टी

बीत गई गरमी की छुट्टी,
गए खेल के दिन;
अब पढ़ने में चलो लगाएं,
अपना हर पल छिन!

नन्हे-मुन्नों के दल निकले,
फूलों से हंसते!
कंधों पर लटकाए अपने—
नन्हे-से बस्ते।

नई पुस्तकें, नई कापियां—
खींच रही हैं मन!
शालाएं खुल गईं, हुआ है—
शुरू नया जीवन!

बहुत दिनोंके बाद मिले हैं,
सहपाठी बिछुड़े;
बजीं घंटियां, हुई प्रार्थना,
मेले नए जुड़े!

किंतु साथ ही टीचरजीकी—
आई याद छड़ी;
शैतानों को देती आई—
है जो सजा कड़ी!

चलो संभलकर, फिर तो कोई—
मंजिल नहीं कठिन,
अब मेहनत का समय आ गया,
गए सैर के दिन!

—सीताराम गुप्त—

४१, कांतिनगर
जयपुर (राजस्थान)

पेंसिल की मशीन का आविष्कारक जोसेफ डिक्सन

१९वीं सदीके शुरूकी बात है। अमरीकामें लिखनेके लिए कलम और स्याहीका प्रयोग होता था। जो पेंसिलें मिलती भी थीं, वे दूसरे देशोंसे आती थीं और देखनेमें सुंदर, अच्छी व सस्ती भी नहीं होती थीं। उस समय एक पेंसिलकी कीमत २५ सेंट (लगभग १ रुपया) होती थी और महंगी होनेके कारण उनकी खपत बहुत कम थी।

पहला अमरीकी जिसने अच्छी और सस्ती पेंसिलें बनानेकी जरूरत महसूस की, वह था अमरीकाके 'मेसेशूटस नगर' में रहने वाला १३ सालका एक लड़का जोसेफ डिक्सन। बात यों हुई कि एक बार जोसेफ डिक्सनको एक पेंसिलकी जरूरत पड़ी। गरीब होनेके कारण वह पेंसिल नहीं खरीद सका। होनहार, परिश्रमी और धुनका पक्का तो वह था ही, उसने सोचा कि खुद ही पेंसिल बनाई जाए। अपने विचारको कार्यरूप देनेके लिए वह पेंसिल बनानेके काममें जुट गया।

जोसेफको पेंसिलके सुरमेमें प्रयोग होने वाली चीजोंके बारेमें कुछ पता नहीं था। वह अक्सर अपने एक मित्र फ्रांसिस पी बाडीके पास जाया करता था, जिसके पिताकी दवाइयोंकी दूकान थी। एक बार जोसेफने अपने मित्रसे अपनी पेंसिल बनानेकी योजनाके बारेमें बात की। योजना फ्रांसिस पी बाडीको भी बहुत पसंद आई और उसने जोसेफको सुरमेमें प्रयोग होने वाले ग्रेफाइट (काला सीसा) और चूना मिट्टीके बारेमें बताया।

जोसेफ फ्रांसिससे थोड़ी-सी ग्रेफाइटकी बुकनी मांगकर ले गया। फिर उसने एक केबिनेट बनाने वालेसे देवदारकी लकड़ीके, बाहरसे गोल और अंदरसे चपटे, दो टुकड़े बनवाए। बादमें उसने ग्रेफाइट और चूना मिट्टीको सानकर पेंसिलके आकारका सुरमा बनाया और उसे चूल्हेकी आगमें पकाया। जब सुरमा कड़ा हो गया, तो उसने उसे लकड़ीके दोनों टुकड़ोंके बीचमें रखकर टुकड़ोंको जोड़ दिया। सूखनेपर उसने चाकूसे सुरमा निकालकर प्रयोग किया, तो उसकी खुशीका ठिकाना न रहा। यह उसके द्वारा बनाई गई पहली पेंसिल थी।

इससे जोसेफ डिक्सनको बहुत प्रेरणा मिली और वह बड़े पैमानेपर पेंसिल बनानेके काममें जुट गया। इसके लिए पैसोंकी जरूरत थी और पैसे उसके पास थे नहीं। उसने हिम्मत नहीं हारी और नौकरी कर ली। दिनमें वह कामपर जाता और रात रात भर जागकर पेंसिलें बनाता। २३ सालकी उम्रमें उसकी शादी केबिनेट बनाने वालेकी लड़की हन्ना मार्टिनसे हो गई।

हन्नासे जोसेफको अपने काममें बड़ी मदद मिली। कुछ समय बाद उसने अपनी छोटी-सी कुटियामें एक प्रयोगशाला खोली और उसमें पेंसिल बनानेकी तीन मशीनें लगा लीं। एक ग्रेफाइट और चूना मिट्टीको मिलाकर सुरमा बनानेके लिए, दूसरी देवदारकी लकड़ीके टुकड़े करनेके लिए और तीसरी उन्हें गोल करनेके लिए। तीनों मशीनें हाथसे चलती थीं।

जोसेफ डिक्सनकी बनाई पेंसिलें भी बाजारमें बिकने लगीं, लेकिन आमदनी बहुत कम होती थी। उसके पास जो पैसा बचता, उसे वह पेंसिलें बनानेमें लगा देता था। इससे उसके पास पैसेकी बहुत कमी पड़ गई। लेकिन भाग्यने उसका साथ दिया।

एक दिन जोसेफने अपनी पत्नीको एक लोहेका स्टोव लाकर दिया। उसपर एक हफ्तेमें जंग लग गया। पत्नीने उससे इसकी शिकायत की। जोसेफने इस तरफ ध्यान नहीं दिया। एक दिन उससे ग्रेफाइटकी बुकनी जमीनपर बिखर गई। जब वह उसे साफ करने लगा, तो वह मुहके बल गिर पड़ा। उठनेपर जब उसने शीशेमें अपना चेहरा देखा, तो वह काला और चमकदार नजर आया।

जोसेफको एक तरकीब सूझी। उसने वह बुकनी जंग लगे स्टोवपर लगाई। इससे स्टोव चमक उठा। फिर क्या था, उसने इसका मसाला बनाना शुरू कर दिया। यह मसाला बाजारमें धड़ाधड़ बिकने लगा। इससे जो आमदनी हुई उससे उसने पेंसिलें बनानेकी एक छोटी-सी फैक्टरी खोल ली। फैक्टरीमें तैयार की गई पेंसिलकी लागत लगभग १० आने आती थी, फिर भी बाजारमें पेंसिलकी मांग न बढ़ी।

डिक्सनके खर्च बहुत बढ़ गए। उसे स्टोव पालिश करने वाले मसाल-से जो आमदनी होती थी, वह पेंसिल बनानेकी फैक्टरीमें लग जाती थी। यह देखकर उसने आमदनी बढ़ानेका दूसरा तरीका निकाला। उसे पता चला कि जिंक और पीतल पिघलानेके लिए जो डच बर्तन इस्तेमाल किया जाता है वह जल्दी चटक जाता है। जोसेफने ग्रेफाइट, चूना मिट्टी और कुछ दूसरी चीजोंकी मददसे डच बर्तनके समान एक दूसरा बर्तन बनाया। उसमें जिंक और पीतलको पिघलाकर देखा, तो वह टूटा नहीं।

जब अमरीकाकी मैक्सिकोसे लड़ाई हुई, तो ग्रेफाइटका धातु गलाने वाला बर्तन लोहेकी चीजें बनानेमें इस्तेमाल होने लगा। मांग बढ़ी तो डिक्सनने इसकी भी एक छोटी-सी फैक्टरी खोल ली। एक साल बाद उसने देखा कि उसे धातु गलाने वाले बर्तनसे ६ हजार डालरकी आमदनी और पेंसिलोंसे ५ हजारकी हानि हुई। जोसेफ डिक्सन इससे निराश नहीं हुआ और बराबर अच्छी व सस्ती पेंसिल बनानेके काममें लगा रहा।

विनोद 'विभाकर'

गृह-युद्धके दिनोंमें पेंसिलोंकी खपत बढ़ी। सैनिकोंको अपने घरपर पत्र लिखनेकी जरूरत पड़ी। वे लड़ाईके मैदानमें स्याही नहीं ले जा सकते थे। कुछ समय बाद जोसेफ डिक्सनने एक ऐसी मशीन बनाई, जो एक मिनिट में १३२ पेंसिलें बनाती थी। मांग बहुत अधिक थी। १८७२ में फैक्टरीमें एक दिनमें ८६,००० के करीब पेंसिलें बनने लगीं और इस प्रकार सस्ती और अच्छी पेंसिलें बनानेका जोसेफ डिक्सनका स्वप्न पूरा हुआ। ●

२५३८, धर्मपुरा,
नई दिल्ली–६

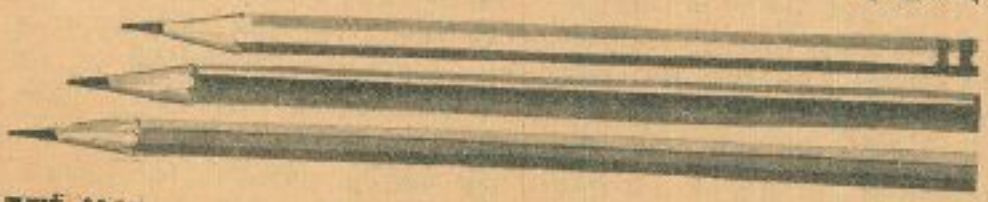

गुब्बारे..

मोंटगोल्फीयरका गुब्बारा, १७८३

५ जून १७८३ का ऐतिहासिक दिन था। फ्रांसके एक नगर अन्नोनेकी बात है। उस नगरके बाहर एक बड़ा-सा मैदान था। वहांपर लोग जमा हो रहे थे। हर वर्गके लोग--अमीर और गरीब, अफसर और चपरासी, पुरुष और स्त्रियां, बच्चे और बूढ़े। उत्साह और कौतूहलसे उनके चेहरे चमक रहे थे।

मैदानके बीचोंबीच एक अजीब-सी चीज पड़ी थी। यह रेशमका एक गोल बड़ा-सा गुब्बारा था। इसकी परिधि सौ फुट थी। एक ओर इसका मुंह था। वह खुला हुआ था। लोग इस गुब्बारेको बड़ी उत्सुकतासे देख रहे थे।

कुछ देर बाद इस गुब्बारेके नीचे लकड़ियोंका ढेर लगा दिया गया। फिर इन लकड़ियोंको आग लगा दी गई। लकड़ियोंसे धुआं उठकर गुब्बारेमें भरने लगा। आग तेज होती गई। सहसा गुब्बारा धीरे धीरे हवामें उठने लगा। फिर वह आकाशमें ऊंचा होता गया। गुब्बारेको हवामें उड़ता देखकर लोगोंको विस्मय हो रहा था। उन्होंने अपने जीवनमें पहली बार गुब्बारेको आकाशमें उड़ते हुए देखा था। फिर वे खुशीसे तालियां बजाने लगे। गुब्बारा आकाशमें उड़ता गया... उड़ता गया। यहां तक कि वह एक बिंदु-सा दिखाई देने लगा। गुब्बारा धरतीसे एक मील ऊंचा उड़ रहा था।

दस मिनिट बीते। गुब्बारेमें धुआं खत्म हो गया। वह धरतीकी ओर उतरने लगा। वह उस मैदानसे डेढ़ मील दूर जाकर धरतीपर गिरा। गुब्बारेका प्रयोग खत्म हो चुका था। लोग खुशी और उत्साहसे भरे हुए घरोंको वापस लौट गए। यह संसारका पहला गुब्बारा था, जो मानवने आकाशमें उड़ाया था। हवामें उड़नेकी ओर यह इनसानका पहला चरण था।

इस गुब्बारेको बनाने वाले और उड़ाने वाले दो भाई थे। उनके नाम थे जोज़ेफ और ईटीनी मोंटगोल्फीयर। ये दोनों फ्रांसके रहने वाले थे और एक धनी आदमीके पुत्र थे।

दोनों बड़े प्रतिभाशाली और बहुत ही परिश्रमी थे। वे अक्सर बादलोंको बड़ी उत्सुकतासे देखते थे। वे सोचा करते कि क्या किसी तरह कोई चीज हवामें उड़ाई जा सकती है। एक दिनकी बात है कि जोज़ेफ मकानकी छतपर खड़ा हुआ था। उसने देखा एक गीली कमीज एक तारपर लटक रही है। उसके नीचे आग जल रही है। सहसा वह कमीज गर्म हो उठी। फिर वह हवासे फूल गई और आकाशकी ओर उड़ने लगी। इस घटनासे जोज़ेफको बहुत प्रेरणा मिली। उसने उसी समय अपने छोटे भाई ईटीनीसे इस घटनाका जिक्र किया। फिर दोनों प्रयोग करनेपर जुट गए। उन्होंने कागज और कपड़ोंके कई छोटे-बड़े गुब्बारे बनाकर प्रयोग किए। आगपर रखनेसे सभी हवामें उड़ने लगे। आखिर एक बड़ेसे गुब्बारेका सफल प्रयोग किया गया।

इन भाइयोंके कारनामे संसार भरमें फैल

गए और हर देशमें हवामें उड़नेके लिए गुब्बारोंके नए नए प्रयोग होने लगे।

अगस्त १७८३ की बात है। मोंटगोल्फीयर भाइयोंसे प्रेरित होकर राबर्ट भाइयोंने एक गुब्बारा बनाया। उसमें हाईड्रोजन गैसका उपयोग किया। यह गैस बहुत हल्की थी। पेरिसमें उन दिनों मूसलधार वर्षा हो रही थी। फिर भी लोग इस गुब्बारेकी उड़ान देखनेके लिए जमा हो गए। वर्षाका इस गुब्बारेपर कोई असर न हुआ। यह गुब्बारा आकाशमें तीन सौ फुट ऊंचा उड़ा। वह पौना घंटा हवामें रहा। फिर यह गुब्बारा पेरिससे तेरह मील दूर एक खेतमें गिरा। वहां गांवके लोग इसे देखकर डर गए। उन्होंने

...की कहानी

– सुरजीत

इसे कोई भूत-प्रेत समझा और लाठियां लेकर गुब्बारेपर टूट पड़े।

मोंटगोल्फीयर भाइयोंको फ्रांसमें बड़ा सम्मान दिया गया। १९ सितंबर १७८३ को जोजेफ-ने बादशाह, रानी और अन्य जनसमूहके सामने यह प्रयोग पुनः दुहराया। गुब्बारेको बड़े सुंदर रंगोंसे रंगा गया। गुब्बारेके साथ एक पिंजरा बांधा गया। इस पिंजरेमें एक भेड़, एक मुर्गा और एक बतखको रखा गया था। गुब्बारा आकाशमें तेजीसे उड़ा। वह पंद्रह सौ फुट तक गया। वह हवामें आठ मिनिट तक रहा। फिर वह दो मील दूर एक जंगलमें उतर गया। सभी जानवर सही-सलामत थे।

एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक पीलात्री डी रोजियर मोंटगोल्फीयरके गुब्बारेमें बैठकर उड़ा। इस कारनामेसे लोगोंने दांतों तले उंगलियां दबा लीं। यह मानवकी हवामें पहली उड़ान थी।

यह ऐतिहासिक प्रयोग २१ नवंबर १७८३ में किया गया। बोईस डी बोलूनके चौकमें एक बहुत बड़ा गुब्बारा बड़े बड़े रस्सोंसे बंधा हुआ था। तमाशा देखनेके लिए हजारों आदमी जमा थे। मकानोंकी छतें, खिड़कियां और दरवाजे लोगोंसे

ऐसे ही किसी गुब्बारे ने आदमी को आकाश में उड़ने की प्रेरणा दी होगी
(छाया : रवींद्र भल्ला)

पटे हुए थे। तिल धरनेकी जगह न थी। निश्चित समयपर गुब्बारेके नीचे रखे हुए घासके ढेरमें आग लगा दी गई। यह दैत्याकार गुब्बारा अपने दो यात्रियों पीलात्री डी रोजियर और एक नव-युवक मारक्युसको लेकर हवामें धीरे धीरे उठने लगा और थोड़ी ही देरके बाद आकाशमें वह एक बिंदुकी तरह दिखाई देने लगा। २३ मिनिटके बाद गुब्बारेकी गैस खत्म हो गई, तो वह एक हरेभरे मैदानमें उतर गया। दोनों यात्री सही-सलामत थे। हवामें इतनी देर तक उड़ने वाले ये दोनों पहले आदमी थे।

मोंटगोल्फीयर भाइयोंने भावी वैज्ञानिकोंको एक नई राह दिखाई जिसपर चलकर आजके हवाई जहाजका आविष्कार हुआ। ●

सी–३४, सुदर्शन पार्क,
मोतीनगर, नई दिल्ली–१५

घर आए मेहमान (पृष्ठ १५ से आगे)

उसके बाद गप्पें चलने लगीं। लेकिन साड़ी-गहनोंकी बातचीतको बीचमें ही रोकना पड़ा, क्योंकि बुकू अपनी चाचीके साथ छेनू-बेनूके लिए चाय-नाश्ता ले आया था। मेहमानोंके सामने बड़े बड़े राजभोग, रसगुल्ले, समोसे वगैरह रखे गए। छेनू मौसियोंने 'नहीं खाएंगे, नहीं खाएंगे'—कहा और सब कुछ ऐसे खा लिया मानो कोई बहुत तकलीफदेह काम कर रही हों। डम्बल भी छेनू-बेनूसे पीछे नहीं रहा। फिर प्लेट चाटने लगा।

बुकूकी मांने कहा, "ऐ बुकू, तेरे डैडी आफिससे आ गए होंगे। उन्हें जाकर कह कि मौसी आई हैं।"

बुकूने चटपट जवाब दिया, "मौसी आई हैं, वह खूब जानते हैं। इसी लिए तो गुस्सेमें लाल हुए बैठे हैं। कह रहे थे—इन लोगोंको घूमने आनेका कोई और दिन नहीं मिला? हमारे सिनेमाके टिकटोंको सड़नेके लिए जानबूझकर आज ही आ धमकी हैं!"

हाय हाय! बेचारी बुकूकी मां क्या करे! लड़केके थप्पड़ मारे, या खुद अपने गालपर ही? आज यह बुकू कैसी दुश्मनी निभा रहा है। भीतर ही भीतर निर्मलाका पारा चढ़ता जा रहा था।

सिर झटकतीं छेनू मौसियां उठीं, "अच्छा तो अब चल, निर्मला, तुम्हारा बहुत नुकसान कर दिया!"

बुकूकी मां किस मुंहसे कहे कि फिर किसी दिन आना छेनू मौसी। बस देखती रही।

जूतेमें पांव फंसाते फंसाते डम्बलने बुकूको कहा, "मुझसे तो खूब पूछा गया, तू हुआ है स्कूलमें भर्ती?"

बुकूने सीना तानकर जवाब दिया, "जरूर।"

"किस स्कूलमें?"

"आदर्श शिक्षा प्रतिष्ठानमें।"

"कितनी किताबें हैं रे?"

"बहुत सारी। कुल मिलाकर सात-आठ। ... बाप रे, और कितनी देर करोगे तुम लोग? अब जाओ ना। रात हो गई। मां अब कब तो खाना बनाएगी, और कब तुम लोगोंकी बुराई करेगी?"

बुराई....!

बस छेनू मौसियोंका हार्ट फेल होनेकी कसर बाकी रह गई। और बुकूकी मां? उसका मुंह देखकर तो लगता था मानो उसका हार्ट फेल हो गया।

मुट्ठी बांधकर घूंसा आगे बढ़ाते हुए डम्बलने कहा, "बुराई क्यों? किस बातकी बुराई?"

"वाह, बुराई नहीं करेगा ....?" बुकू अवाक हो गया, "घर आए मेहमान जब चले जाते हैं, तब उनकी बुराई नहीं की जाती? यह नहीं कहा जाएगा—लड़का कितना जंगली और भुक्खड़ था। मौसियां कितनी घमंडी थीं। इतनी देर सिर खाती रहीं और पैसा भी खर्च करवाया। इसके अलावा ..."

बुकू इतनी जल्दी जल्दी बोलता है कि फिर उसे रोकना मुश्किल हो जाता है। जो कुछ कहना है वह सब कह लेता है। फिर भी उसके 'इसके अलावा' को रोककर छेनू मौसी बोलीं, "बोल, बाबा, जी भरके बोल..." यह कहकर वे धपधप करतीं बाहर चली गईं। पीछे पीछे बेनू मौसी और डम्बल।

उनके जाते ही बुकूकी मांने रणचंडीका रूप धारण कर लिया। मारना और चिल्लाना शुरू हो गया, "बोल, शैतान, तू उस तरह क्यों बक रहा था? बोल, जल्दी बोल। आज मैं तुझे जानसे मार डालूंगी। चुप क्यों बैठा है? पाजी, बंदर! लोगोंके सामने मेरा सिर झुका दिया!"

गड़बड़का आभास पाते ही बुकूके पिता भी आ गए, "क्या हुआ? बच्चेको इतना मार क्यों रही हो?"

"मारूंगी नहीं?" बुकूकी मांने हांफते-हांफते कहा, "आज मैं इसे नहीं छोड़ूंगी। जानते हो क्या किया है इसने?"

एक एक करके बुकूके कारनामे बताती गई निर्मला। बुकूके पिताको भी गुस्सा चढ़ आया। वह भी मारने लगे। सचमुच, जो लड़का बाहरके लोगोंके सामने इस तरह मां-बापकी बेइज्जती करता है, उसे मार लेनेपर भी गुस्सा नहीं मिटता।

बुकूकी मां और पिता दोनों एक साथ चिल्लाकर बोले, "बोल, तूने वह सब क्यों कहा था?"

बुकू बहुत देरसे चुपचाप बैठा मार खा रहा था, लेकिन अब उससे नहीं रहा गया। जोरसे रो पड़ा। रोते रोते बोला, "दुपहरमें खुदने ही तो एक सौ बार कहा था—हर वक्त सच बोलना, किसीसे कुछ छिपाना मत; और अब खुद ही मार रहे हो? मैं कैसे समझूं, असलमें मुझे क्या करना चाहिए?"

फ्लैट–२८, ब्लाक–३,
२८।१।ए, गड़ियाहाट रोड,
कलकत्ता–१९

(अनुवाद : श्रेकाली चौधरी)

kissekahani.com

शिक्षक : "वन-की हवा स्वास्थ्य-दायक होती है, कसे?"

छात्र : "क्योंकि किसी भी जंगली जानवरको मैंने अस्पतालमें नहीं देखा!"

•

राम : "भाई श्याम, गजब हो गया!"

श्याम : "क्यों, ऐसा क्या हो गया?"

राम : "मेरी साइकिल खो गई!"

श्याम : "तो विज्ञापन क्यों नहीं दे दिया?"

राम : "विज्ञापन देनेसे क्या फायदा होगा, साइकिलको पढ़ना थोड़े ही आता है?"

•

सोहन : "पिताजी, आज दौड़-प्रतियोगितामें मुझे दूसरा स्थान मिला।"

पिताजी : "बहुत खूब! कितने छात्र उसमें भाग ले रहे थे?"

सोहन : "दो!"

•

रमेश : "सुरेश, मैं दुबला-पतला होता जाता हूं और तुम मोटे-तगड़े। क्या इसका कारण बता सकते हो?"

सुरेश : "इसका कारण भौगोलिक है। मिट्टी एक जगहसे कटकर दूसरी जगह जमा हो जाती है!"

•

शिक्षक : "मोहन, तुम बेवकूफ हो!"

मोहन : "नहीं, सर, आज मैंने अपने छोटे भाईको बेवकूफ कहा था, तो पिताजी मुझे डाटकर बोले कि जो खुद बेवकूफ होता है, वही दूसरोंको बेवकूफ कहता है!"

•

गप्पू अपने कुत्तेके साथ घूमने निकला। घूमते हुए वह स्टेशन पहुंचा। सभी वजन करने वाली मशीनपर अपना अपना वजन ले रहे थे। साथमें एक टिकट निकलता था—जिसपर वजनके साथ साथ भविष्यवाणी भी रहती थी। गप्पूने भी अपने कुत्तेको उस मशीनपर चढ़ाया। एक टिकट बाहर निकला, जिसपर कुत्तेके वजनके साथ साथ लिखा था—'आप बड़े भावुक और विनोदी स्वभावके हैं। आपके विचार सुलझे हुए हैं। इन्हीं गुणोंके कारण आपको जल्द लोकप्रियता मिलेगी।'

•

शिक्षक (रेखा गणित पढ़ाते समय) : "गप्पू, रेखाओंके कितने प्रकार हैं?"

गप्पू : "दो, मास्टरजी।"

शिक्षक : "कौन कौनसे?"

गप्पू : "एक पतली रेखा जो मेरी बहन है और दूसरी मोटी रेखा जो मेरे पड़ोसमें रहती है!"

•

हिन्दीव्याकरणका घंटा था। शिक्षक छात्रोंको अनेक शब्दोंके लिए एक शब्दका अभ्यास करवा रहे थे।

कुछ सिखा देनेके बाद उन्होंने छात्रोंसे पूछना शुरू किया।

शिक्षक : "देखने योग्य—के लिए एक शब्द बताओ?"

एक छात्र : "ताजमहल!"

शिक्षक : "पढ़ने योग्य?"

दूसरा छात्र : "कहानी!"

•

मालिक (मैनेजरसे) : "इतने पैसे देकर लंगड़े खजांचीको क्यों रखा है?"

मैनेजर : "इसलिए कि वह पैसे चुराकर भाग नहीं सकता!"

•

गप्पूके पिता उसे बता रहे थे, "सफलताके मार्गमें हमेशा कांटे बिछे रहते हैं। यह कोई पहाड़ नहीं है। कोई भी पा सकता है इसे। जरू-

रत है इसे पानेके लिए सावधानीसे कदम उठाने की!"

"इसी लिए तो मैं जूते पहनकर चलता हूं, पिताजी!" पप्पूने कहा।

•

एक बार एक मोटा आदमी हाथीपर सवार कहीं चला जा रहा था। एक आदमी उसे बड़ा घूरकर देख रहा था। इसपर मोटे आदमीको गुस्सा आया। उसने कहा—"क्या घूर घूरकर देख रहे हो? हाथी कभी नहीं देखा क्या?"

लड़का : "हाथी तो कई बार देखा था, लेकिन हाथीके ऊपर हाथी आज पहली बार देख रहा हूं!"

•

शिक्षक अपने छात्रसे काफी परेशान हो उठे थे। रोज कोई न कोई शरारत कर बैठता था। एक दिन तंग आकर शिक्षकने कहा—"तुमने मेरा दिमाग खराब कर दिया। आज मैं तुम्हारे पितासे मिलता हूं।"

"जरूर मिल लीजिए," छात्रने कहा "सर, हमारे पिताजी दिल और दिमागके अच्छे डाक्टर हैं!"

•

गप्पू मलेरियासे पीड़ित पिताजीके पास विज्ञापनकी एक कतरन लेकर पहुंचा। विज्ञापनमें छपा था—'मलेरियाकी अचूक दवा। यह संस्था निःस्वार्थ सेवाकी कसम ले चुकी है। जो कोई यह प्रमाणित कर देगा कि यह दवा बेकार है उसे पचास शीशियां दवाकी बिना मूल्य दी जाएंगी। आइए और एक बार इसकी परीक्षा कीजिए!'

•

पुत्र : "पिताजी, मैंने आपसे पहले ही कह दिया था कि इस नौकरके रंग-ढंग अच्छे नहीं हैं; इसे चोरी करने की आदत है।"

पिता : "क्या बात हुई? जरा बताओ तो सही।"

पुत्र : "और क्या होगा, जो कलम आप दफ्तरसे उठा लाए थे, वही वह लेकर चला गया!"

•

एक बार एक अभिभावक स्वयं फीस देने स्कूल चले गए। फीस देकर उन्होंने शिक्षकसे कहा—"क्या बताएं, इस लड़केके पढ़नेमें जितना खर्च होता है, उतनेसे सालमें तीन बैल खरीदे जा सकते हैं।"

शिक्षक : "इसी लिए तो वह बैल बनता जा रहा है!"

•

रमेश शरारती लड़का था। जिस किसीके साथ वह शरारत कर बैठता था। शिक्षक उसे खूब पीटते थे। फिर भी उसके स्वभावमें परिवर्तन नहीं आया। एक दिन तंग आकर शिक्षकने कहा—"न जाने भविष्यमें तुम क्या बनोगे?"

झट रमेशने उत्तर दिया—"एक नेक और रहमदिल इनसान।"

"तुम...और नेक और रहमदिल इनसान!" शिक्षकने आश्चर्य प्रकट किया।

"तो फिर शैतान?" रमेशने कहा।

"ऐसा क्यों?" शिक्षकने पूछा।

"इसलिए कि नेक और रहमदिल इनसानके पाले पड़ा तो नेक और रहमदिल बनूंगा अगर किसी शैतानके पाले पड़ा तो शैतान बनूंगा। देखना है पहले किसके पाले पड़ता हूं!"

•

गप्पू लायब्रेरीसे एक किताब लाकर उलट-पुलट रहा था। किताबका शीर्षक था—'बच्चोंकी देखभाल और सुरक्षा'। गप्पूके पिता दफ्तरसे वापस आ गए थे। गप्पूको देखकर उन्होंने पूछा—"अपने कोर्ससे बाहरकी इस किताबको ऐसे उलट-पलटकर क्या देख रहे हो?"

"मैं देख रहा हूं कि मेरी देखभाल और सुरक्षा ठीक ढंगसे हो रही है या नहीं!"

•

शिक्षक गुरुत्वाकर्षणके बारेमें पढ़ा रहे थे। कह रहे थे, "गुरुत्वाकर्षणके कारण ही हम लोग धरतीपर टिके हुए हैं ...।"

एक छात्रने पूछा—"इस नियमके जाननेके पहले हमारे पुरखे कहां टिके थे?"

—गोविंद झा

शेर का पंजा (पृष्ठ १९ के आगे)

मोहनने पूछा, "तू बाहरका रास्ता जानता है?"

"हां, जानता हूं।"

"हमें बाहर पहुंचा देगा?" सरिताने पूछा।

लड़का बोला, "नहीं, वहां दरवाजेपर रहमता है।"

गिरीशने कहा, "तू भी भीख मांगने जाता है?"

"हां।"

गिरीशने बातों बातोंमें मालूम किया—उसका नाम गोपाल था। शामको सब लोग इकट्ठे होंगे। जो कुछ भी दिनभरमें मिलेगा, वह सब जमा होगा। कागीमें लिखा जाता है कि कौन कितना लाया। जो ज्यादा लाता है उसे बढ़िया खाना मिलता है, जो कम लाता है उसे घटिया। जो बिल्कुल नहीं लाता, उसे खाना नहीं दिया जाता। कुल चालीस भिखारी हैं जिनको चार हिस्सोंमें बांटा जाता है। उनपर एक एक आदमीकी निगरानी रहती है। तीन लोग हिसाब-किताब करते हैं।

गोपालने आगे बताया, जिनका कोई रिश्तेदार नहीं होता, उसे कम तकलीफ दी जाती है। क्योंकि वे लोग आसानीसे भीख मांगनेको तैयार हो जाते हैं। जो बहुत शैतान मालूम पड़ते हैं उन्हें बंदा बनाया जाता है, ताकि वे भाग न सकें।

गिरीशने पूछा, "तू भाग क्यों नहीं जाता?"

वह बोला, "अब भागकर क्या करूंगा, कोई काम भी तो नहीं मिलेगा। दूसरे उस्ताद जब पकड़वा लेंगे, तो बहुत मारेंगे।"

गिरीशने कहा, "अच्छा, यहां पुलिसको बुलाकर ला सकता है।"

"न, भाई, ऐसा नहीं कर सकता। मैं जैसे ही पुलिससे कुछ कहने जाऊंगा, तो हमारी टोलीकी निगरानी करने वाला पकड़ लेगा। बहुत मार पड़ेगी। तुम नहीं जानते, उस्ताद राक्षस है, राक्षस।"

"अच्छा यहांका पता क्या है?"

गोपालने गरदन हिलाकर कहा, "पूरा पता तो जानता नहीं। वैसे जिधरसे हम आते हैं उससे थोड़ी ही दूरवाली जगहको मछुआपाड़ा कहते हैं। भई, बात यह है मैंने कोई खत-वत किसीको डाला नहीं है। उस्ताद किसीसे बात भी नहीं करने देता। हमेशा कहता है, अपने मतलबसे मतलब रखा करो। जरा-सी बात पर खूब मारता है।"

गिरीश, मोहन और सरिताकी हर मिनिटपर हिम्मत छूटती जा रही थी। पता मालूम होता, तो भी कोई तरकीब चलाते। गिरीशने एक मिनिट कुछ सोचा, क्यों न मछुआपाड़ा करके खत लिख दिया जाए। सुना है पुलिसमें सूंघनेकी ताकत होती है। सूंघकर चली आएगी।

उसने पूछा, "अच्छा, गोपाल, तुम डाकघरमें चिट्ठी तो छोड़कर आ सकते हो। बोलो, डाल आओगे?"

गोपाल डरता डरता बोला, "डाकघरमें तो नहीं जाऊंगा। रस्तेमें बंबेमें कहो तो मौका देखकर डाल दूं। वैसे पहुंच वहांसे भी जाएगी।"

"ठीक है, इतना कर दोगे, तो भी शायद काम बन जाए। मैं चिट्ठी लिख लूं, तब दूंगा। देखो किसीको मालूम न हो।"

गोपालने हामी भर ली। (क्रमशः)

४४ अमरमहल, घाटकोपर रोड,
चेम्बूर, बम्बई–७१

ज्ञान बच्ची (पृष्ठ २९ से आगे)

पास पहुंचे। दादा मेंढक को दर्दसे छटपटाते हुए देखकर कछुएजीको दया आ गई। उन्होंने मछलीकी दुम पकड़ ली। फिर उसे अपनी ओर खींचने लगे। दादा मेंढकने दूसरी ओरसे जोर लगाया। धम! दादा मेंढक तालाबमें गिर पड़े। धम! मियां कछुए भी दूसरी ओर तालाबमें लुढ़क गए। मछली जो सारी मुसीबतकी जड़ थी, अब पानीमें तैर रही थी।

दादा मेंढकने हांफते हुए कहा, "भइया कछुए, बहुत बहुत धन्यवाद! तुम अगर एक मिनिट और न आते, तो मैं गला घुट जानेसे मर गया होता!"

"दादा, अब कभी लालच न करना," कछुएने कहा।

"भाई, मेरी तोबा। अब मैं भूलकर भी अपनी बिसातसे बड़ा कौर मुंहमें न रखूंगा," दादाने कानोंको हाथ लगाते हुए कहा।

फिर दादा मेंढक नहानेके लिए तालाबमें कूद गए और नहा-धोकर अपने घरौंदेमें चले गए। ●

(थार्नटन डब्ल्यू. बर्गेसकी एक कहानीके आधारपर एस. प्रेमी द्वारा प्रस्तुत)

पिण्डी साड़ी एम्बाडरी, ९४ गफ्फार मार्केट,
करोल बाग, नई दिल्ली–५

खिलौनों का डिब्बा

—अरुणकुमार

चीनी अजदहा

बच्चो, तुमने चीनी राक्षस या अजदहेका नाम तो सुना होगा। जिस तरह हमारा राष्ट्र-चिह्न सिंह है, चीनियोंका राष्ट्र-चिह्न भयंकर अजदहा है।

अगर तुम यह देखना चाहते हो कि यह अजदहा किस तरह पेचोताब खाता है, तो सामने दिए हुए चित्रोंके पृष्ठको हाशिएकी रेखापर काट लो। इस पृष्ठके पीछे सफाईके साथ कोई रंगीन या काला कागज इस तरह चिपका दो कि दोनोंका एक पन्ना बन जाए। इसे सूखनेके लिए किताबोंसे दबाकर रख दो। जब सूख जाए, तो चित्रोंके बाहरकी काली रेखाओंपर अजदहेका धड़ और पूंछ काट लो।

नमूना आकृति-१

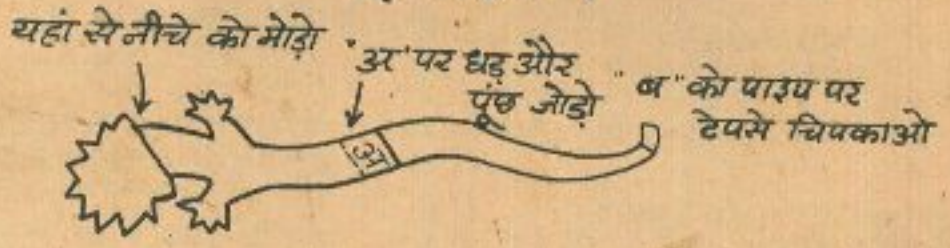

kissekahani.com

नमूना आकृति-२

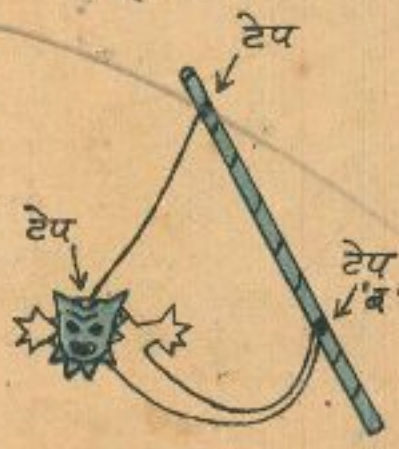

नमूना आकृति-३

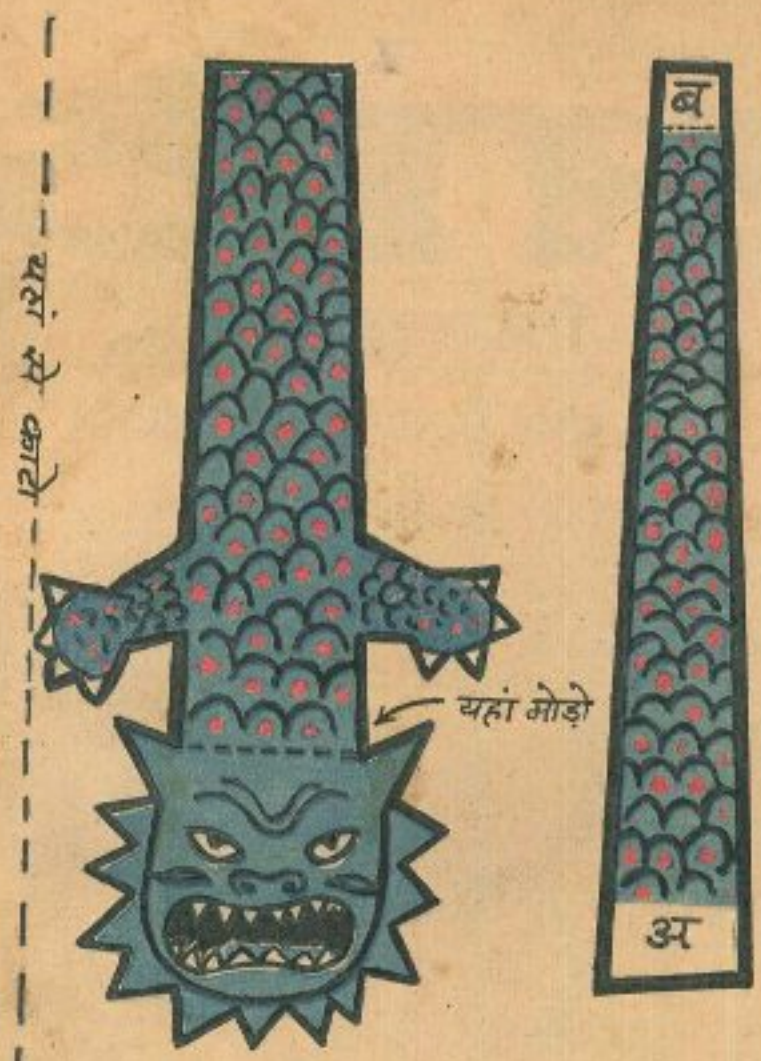

नमूना आकृति–१ की तरह धड़का पिछला हिस्सा पूंछके अगले हिस्से 'अ' पर चिपका दो। फिर सिरको नीचेकी तरफ दानेदार रेखापर मोड़ दो। अब पूरा अजदहा तैयार हो गया।

एक लेमन या सोडा पीनेका पाइप लो। अजदहेके सिरके पीछेसे, दानेदार रेखाके बीचसे एक मजबूत धागा छेद करके या सूईकी सहायतासे निकालो। इसका दस सेंटीमीटर लंबा टुकड़ा काट लो। धागेका दूसरा सिरा आकृति–२ की तरह पाइपके ऊपरवाले सिरेके पास या तो बांध दो या टेपसे चिपका दो। इसी प्रकार पूंछवाला 'ब' सिरा पाइपके नीचेवाले हिस्सेपर, थोड़ा पाइप छोड़ते हुए टेपसे चिपका दो।

नमूना आकृति–३ की तरह जब तुम सोडा-वाटर पीनेके इस पाइपको हौले हौले घुमाओगे, तो अजदहा पेचोताब खाएगा। देखो वह क्या क्या हरकतें करता है!

अगली बार हम तुम्हें और मजेदार खेल देंगे। ●

सबसे भले विमूढ़ (पृष्ठ २३ से आगे)

अपने कौशलके सामने वे अपने अहंकारको बनाए रखते हैं और लड़-झगड़कर भी अपना बेड़ा खींचे लिए जाते हैं। उस समय उनको निकाल बाहर करना भले ही संबंधित कम्पनी या व्यापारीके लिए संभव न हो पाता हो, लेकिन वे हमेशा किनारेपर रखे रहते हैं—घाटका ठेला, न जाने कब पानीमें बह जाए!

चौथा गुण : विनम्रता

कौशल और विनम्रताका चोली-दामनका साथ है। यों तो दोनों एक-दूसरेसे अलग अलग प्राप्त किए जा सकते हैं, लेकिन बिना कौशलके विनम्रता पोली और खुशामद भरी होती है और बिना विनम्रताके कौशल उद्दंडता और अहंकार उत्पन्न करता है।

कुशल होनेके साथ सर्वप्रिय बनना एक ऐसा गुण है, जो आदमीको कभी किसी रोजगारमें मार नहीं खाने देता। यह सही है कि एक आदमी हर आदमीको खुश नहीं रख सकता। लेकिन यह भी सही है कि एक आदमी हर आदमीको नाखुश रख सकता है। इस स्थितिसे बचना सर्वप्रिय होनेकी तरफ पहला कदम है।

कभी तुमने रेलवे, पोस्टआफिस, सिनेमाओं आदिके टिकटघरोंपर ऐसे व्यक्ति देखे हैं, जो काम तो तेजीसे निपटाने लगते हैं, लेकिन साथ ही साथ खरीदने वालेसे इस तरह पेश आते हैं, मानो वह उन्हें दुःख देनेके लिए वहां पहुंच गया हो? तो अपने आपको भी कभी ऐसा मत बनने दो।

इसका सबसे बड़ा लाभ तो यही होता है कि तुम्हारा अपने काममें मन लगता है। कमसे कम वह उतना भारी महसूस नहीं होता, जितना भौंहें टेढ़ी रखने वाले लोगोंको अपना काम महसूस होता है।

ध्यान रखो, विनम्रताके ये माने कदापि नहीं हैं कि लोग तुम्हें घोलकर पी जाएं। यदि विनम्रताके साथ तुम एक और गुण निडरता भी अपने भीतर पैदा कर लो, तो तुम्हारे दूसरे गुणोंमें चार चांद लग जाएंगे।

अंतिम गुण : निडरता

कुछ शेखीखोर छात्र ऐसे होते हैं, जो विनाशकारी कामोंमें सबसे आगे पाए जाते हैं। वे छाती ठोंक ठोककर ऐलान करते हैं कि वे किसीसे नहीं डरते। लेकिन जब वे असली मुसीबतके सामने आते हैं, तो पीठ दिखाकर भाग खड़े होते हैं या अपना कसूर अपने किसी दूसरे साथीके सिर मढ़नेकी कोशिश करते हैं। यह निडरता नहीं।

निडरताका अर्थ है कि तुम्हें अपनेपर, अपने कौशल तथा अन्य गुणोंपर पूरा विश्वास हो और तुम बड़ेसे बड़े अधिकारीके सामने विनयके साथ अपने कौशलका पूर्ण प्रदर्शन कर सकते हो। निडरताका अर्थ है खूब सोच-समझकर कठिनसे कठिन स्थितियोंमें निर्णय करना, फिर उस निर्णयपर दृढ़ रहना।

तुमने कई ऐसे सहपाठियोंको देखा होगा, जिनका स्टेजपर जाते दम निकलता है। कहीं अगर मेजके पास खड़े होकर सारी कक्षाके सामने उन्हें कोई नन्हा-मोटा भाषण देना पड़ जाए, तो पतलूनके भीतर उनकी टांगें कांपने लगती हैं। दूसरी ओर, उनके 'गुरु' कुछ ऐसे छात्र भी होते हैं, जिन्हें विषयका ज्ञान भले ही कुछ न हो, वे हल्के-फुल्के भावसे स्टेजपर पहुंच जाएंगे और पूरी अंतरराष्ट्रीय राजनीति बघार आएंगे—भले ही दिए हुए विषयसे उसका कोई संबंध न हो।

और चाहे जो कुछ हो, इस प्रकारकी निडरता प्रत्येक छात्रको अपने भीतर बार बारके अभ्याससे पैदा करनी चाहिए। अनेक टेस्टों और चुनावोंमें ऐसे छात्र जब उम्मीदवार होते हैं, तो कभी कभी अपनी निडरता-के बलपर ही अच्छा प्रभाव छोड़ आते हैं—और यदि कहीं वे अपने विषयमें भी पारंगत हुए और दूसरे गुणोंके साथ साथ विनम्र भी हुए, तो ऐसे उम्मीदवारोंको चुनाव कमेटियां श्रेष्ठ समझती हैं।

यदि भविष्यके लिए आजसे ही तैयारी करो, तो भविष्य तुम्हारा है—वरना कहना ही होगा कि 'सबसे भले विमूढ़, जिन्हें न व्यापै जगत् गति।' ●

'पराग' का आगामी अगस्त अंक—

'स्वतंत्रता विशेषांक'

१६ पृष्ठ अधिक मूल्य वही ५० पैसे

विशेष मजेदार कहानियां :

१– गुलाब का फूल : फज्लूलबारी
२– हिम-मानव की चाकलेट : सुशीला देवेश
३– गणित पहेलियों का जादूगर : देवसरे
४– हड़ताल : अवतारसिंह
५– चोर की अद्भुत यात्रा : टी. एन. मिश्र
६– आलसियों का उस्ताद : रेखा मिश्र
७– पीले गुल की रोशनी : देवेश ठाकुर
८– एक शलगम की कहानी : बहादुर खान
९– खटपटखां का हिसाब : 'लहर'
१०– मूर्खों का नगर : रेवा दास

और

११– धारावाहिक साहसिक उपन्यास : शेर का पंजा

और

सदा की भांति मनोहर रंगीन चित्र, चुटकुले, शिशु-गीत — सभी कुछ

अपने एजेण्ट से अपनी प्रति सुरक्षित करा लो

चींटी रानी

चींटी रानी हाट चली,
सेवक लेकर साठ चली,
हाथी उनके रथ को खींचे
पर्वत कुचले रथ के नीचे!

हाथी करते हल्ला-गुल्ला,
चींटी लाई है रसगुल्ला!
वह सबको फटकार चली,
बहती रस की धार चली!

—सरस्वतीकुमार 'दीपक'

पिछले कई वर्षोंसे 'पराग' में शिशु-गीत छापे जा रहे हैं। इन शिशु-गीतोंके चयनमें बड़ी सावधानी बरती जाती है। क्योंकि शुद्ध शिशु-गीत लिखना उतना आसान नहीं है जितना समझा जाता है, इसलिए अच्छे गीत बहुत कम लिखे जाते हैं। ये गीत ऐसे होने चाहिएं कि इन्हें चारसे छह साल तकके बच्चे आसानीसे जबानी याद कर लें और अन्य भाषा-भाषी बड़े बच्चे भी इनका आनंद ले सकें। इनसे मुहावरेदार हिन्दी सरलतासे जबानपर चढ़ जाती है।

नन्हे-मुन्नों के लिए नए शिशु गीत

kissekahani.com

डबल फेल

पापा ने यूं लिखा था—"प्रिय बेटे सुलतान,
लिखो कि कैसा हाल है, खत्म हुए इम्तिहान?
खत्म हुए इम्तिहान, नतीजा क्या निकला है?"
पापा को पत्रोत्तर कुछ इस तरह मिला है—
"हाल-चाल है ठीक, नई कुछ बात नहीं है,
जो था पिछले साल नतीजा पुनः वही है!"

—रसेन्द्र

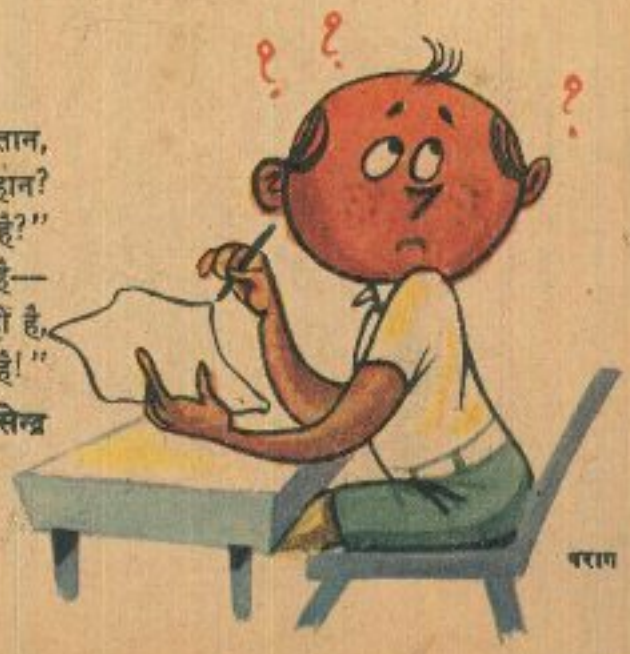

kissekahani.com

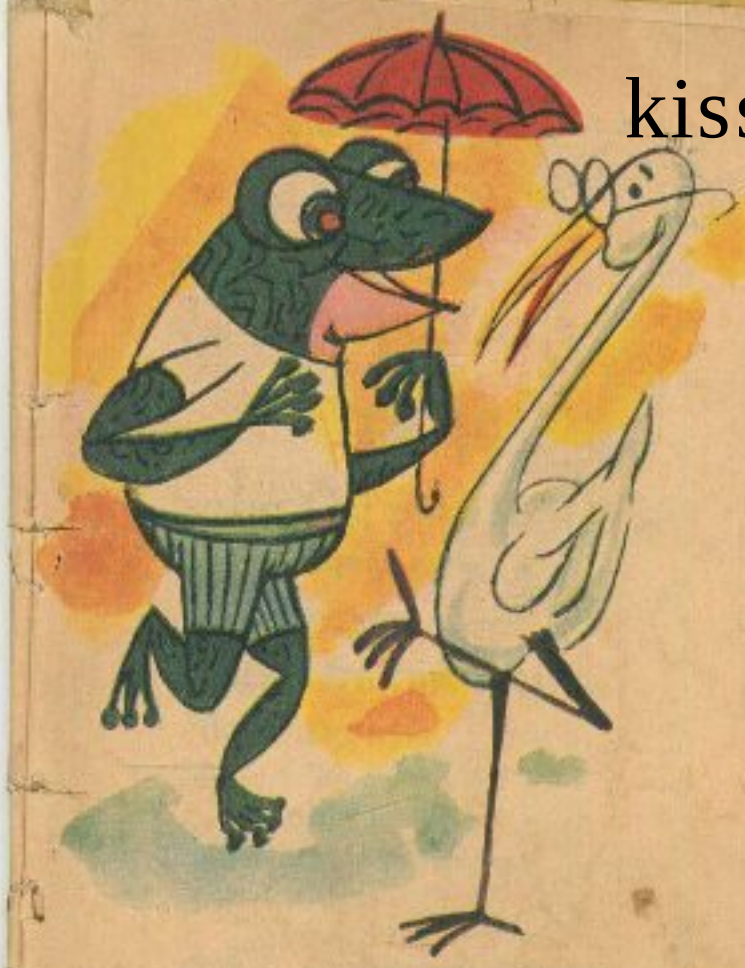

सुकुमार मेंढक

छाता ताने चला रात में,
मेंढक करने सैर।
बगुला भगत मिला जब उसको,
लगा पूछने खैर।

बगुला बोला—"छाते से यह
कैसी प्रीति लगाई?"
तभी छींक कर मेंढक बोला,
"ओस पड़ रही भाई!"

—मंगलराम मिश्र

आई अकल ठिकाने

एक रोज मिस्टर चूहे को
नया शौक चर्राया;
फौरन जा बाजार एक
सिगरेट की डिब्बी लाया।

जा बैठा सोफे के ऊपर
टांगों को फैलाकर,
बड़ी शान से उस सिगरेट को
दांतों तले दबाकर।

लेकिन माचिस से जैसे ही
सिगरेट लगा जलाने;
मूंछें जलकर खाक हो गईं,
आई अकल ठिकाने!

—सुबोधकुमार द्विवेदी